RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17 प्रकाशन तिथि 25 अक्टूबर 2015

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका नवम्बर 2015

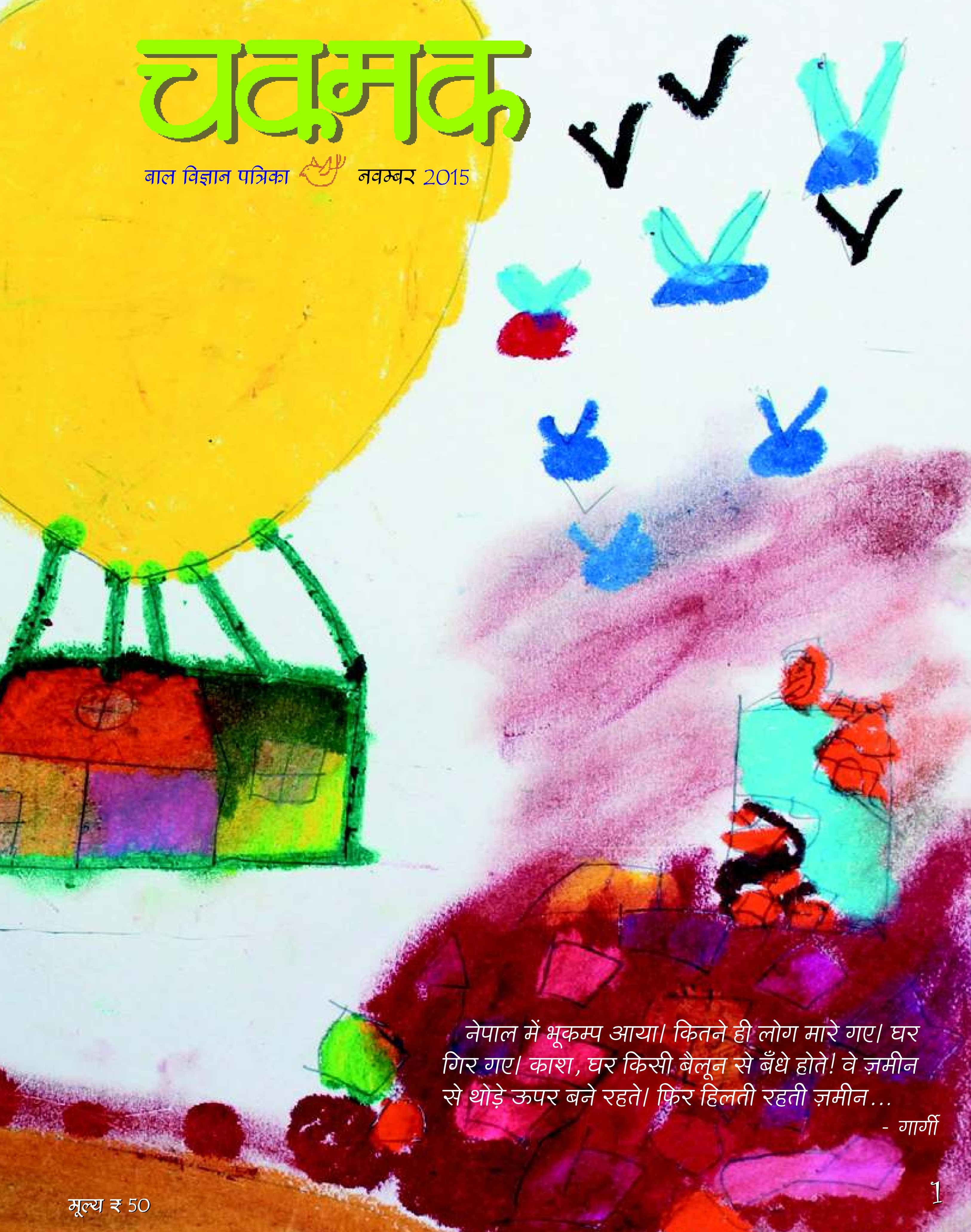

नेपाल में भूकम्प आया। कितने ही लोग मारे गए। घर गिर गए। काश, घर किसी बैलून से बँधे होते! वे ज़मीन से थोड़े ऊपर बने रहते। फिर हिलती रहती ज़मीन...

- गार्गी

मूल्य ₹ 50

सतरंगी विविधता

स्पर्श सोनी
IV-E
डीपीएस लुधियाना

सोचो अगर इस दुनिया में एक ही रंग होता,
यह दुनिया कितनी बुझी सी लगती।
सोचो अगर हमें इंद्रधनुष में सात रंगों का
मेल ना मिलता, तो यह इंद्रधनुष खूबसूरत कैसे
लगता?
सोचो अगर सब कुछ लाल या पीला या
हरा या नीले रंग में होता,
यह संसार कितना बेरंगी सा लगता।
सोचो अगर हम सब भी एक ही तरह के
दिखते, बोलते,
तो यह दुनिया कितनी नीरस सी लगती।

इस अंक में

2 सतरंगी विविधता / स्पर्श सोनी
4 लाल्टू की दो रचनाएँ
6 अजगर का पेट / अब्दुल बिस्मिल्लाह
8 अन्दाज़े बयाँ और ... / पद्मजा गुनगुन
13 शोर बरपा है / आमोद कारखानिस
14 दोस्त / शशिकिरण
18 सुबह चिरूर-चिरूर शाम चिरवाक-चिरवाक / विकास अग्रवाल
20 भाषा आइकन की / इन्द्राणी रॉय
21 रस्सी से पानी खींचें / अंकुश
22 पहेली - सक्लेशपुर की रेल यात्रा / मनीष जैन
23 पानी कार्टून / कनक
24 ऑर्किस इटैलिका उर्फ बिन चड्डी का फूल
25 बोली रंगोली
28 सलाम ! / संजीव
30 हमने देखे अजब पहाड़ / श्याम सुशील
32 बिलाड़ी बड़ी या केज
33 माथापच्ची
34 मेरा पन्ना
37 मुल्क / इब्ने इंशा, असगर वजाहत
38 मिलना दो मगरमच्छों का / जसबीर भुल्लर
40 अनारको.../ सतीनाथ षडंगी
42 दो कविताएँ / महेश कुमार
43 फनी पाठशाला / इरफान
47 चित्र पहेली / कविता तिवारी

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 350 नवम्बर 2015

बालदिवस की शुभकामनाएँ

श्री राम, पाँचवीं, विद्यावनम, कोयम्बटूर, तमिलनाडु

आवरण चित्र
गार्गी शिंगणे, तीसरी, सेंट जोसफ स्कूल, भोपाल

हाशिए के चित्र
प्रशान्त सोनी

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

वितरण
सोमेश दास

सहयोग
वरुण ग्रोवर
प्रभात
मिहिर
कमलेश यादव

एक प्रति :	50.00
वार्षिक :	500.00
तीन साल :	1350.00
आजीवन :	6000.00

सभी डाक खर्च हम देंगे।

विप्रो एप्लाइंग थॉट इन स्कूल्स के वित्तीय सहयोग से विकसित

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण-
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृप्या खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य

ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोन: (0755) 4252927, 2550976, 2671017, 9425010115
फैक्स: (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

लाल्टू से बातचीत

लाल्टू

लाल्टू के माता-पिता उसे लेकर मेरे घर आए। मैंने दरवाज़ा खोला तो लाल्टू के पापा ने उससे कहा, "लाल्टू जी को नमस्कार कहो।"

लाल्टू थोड़ी देर चुप मेरी ओर देखता रहा। फिर कहा, "अरे! लाल्टू तो मैं हूँ।" हम सब हँस पड़े। अन्दर आते हुए लाल्टू के पापा ने कहा, "तुम्हें बतलाया तो था कि इनका नाम भी लाल्टू है।"

लाल्टू को यह जानकर अचरज हुआ कि मेरा नाम भी लाल्टू है।

वह सिर घुमाकर कहता रहा, "नहीं, तुम्हारा नाम लाल्टू नहीं है।"

देर तक मेरा "हाँ, है" और उसका "नहीं, है" चलता रहा। कभी वह धीरे-से कहता, "नहीं है", तो मैं धीरे-से कहता, "हाँ, है।" कहते हुए उसका सिर धीरे-से हिलता। कभी वह तेज़ी-से कहता, "नहीं है", तो मैं भी तेज़ी-से कहता, "हाँ, है।" वह नाराज़ होता तो मैं नाराज़ होता, वह हँसकर कहता तो मैं हँसकर कहता। आखिरकार उसने जीभ निकालकर मुझे चिढ़ाते हुए कहा, "दो लोगों का एक नाम भी होता है!"

मैं थोड़ी देर तो समझ नहीं पाया कि कैसे उसे जवाब दूँ। फिर मैंने कोशिश की, "क्यों, तुम अपनी मम्मी को कैसे पुकारते हो?" उसने कहा, "मम्मा!"

मैं अपनी माँ को "माँ" कहता हूँ, पर मैंने उससे झूठ कहा, "मैं भी अपनी मम्मी को 'मम्मा' कहता हूँ, तो तुम्हारी मम्मी और मेरी मम्मी दोनों का एक नाम हुआ कि नहीं?"

उसने कहा, "मम्मा तो छोटे बच्चे कहते हैं, बड़े थोड़े ही कहते हैं?"

"मैं तो कहता हूँ," मैं अड़ गया।

वह मेरे पास आया और उसने धीरे-से कहा, "मेरी मम्मी का एक और नाम भी है।"

मैं झुककर अपना कान उसके पास ले गया और फिसफिसाते हुए पूछा, "क्या नाम है तुम्हारी मम्मी का?"

वह घूमकर इधर-उधर देखने लगा, फिर यह कहते हुए बालकनी की ओर भाग गया, "मैं नहीं बतलाता।"

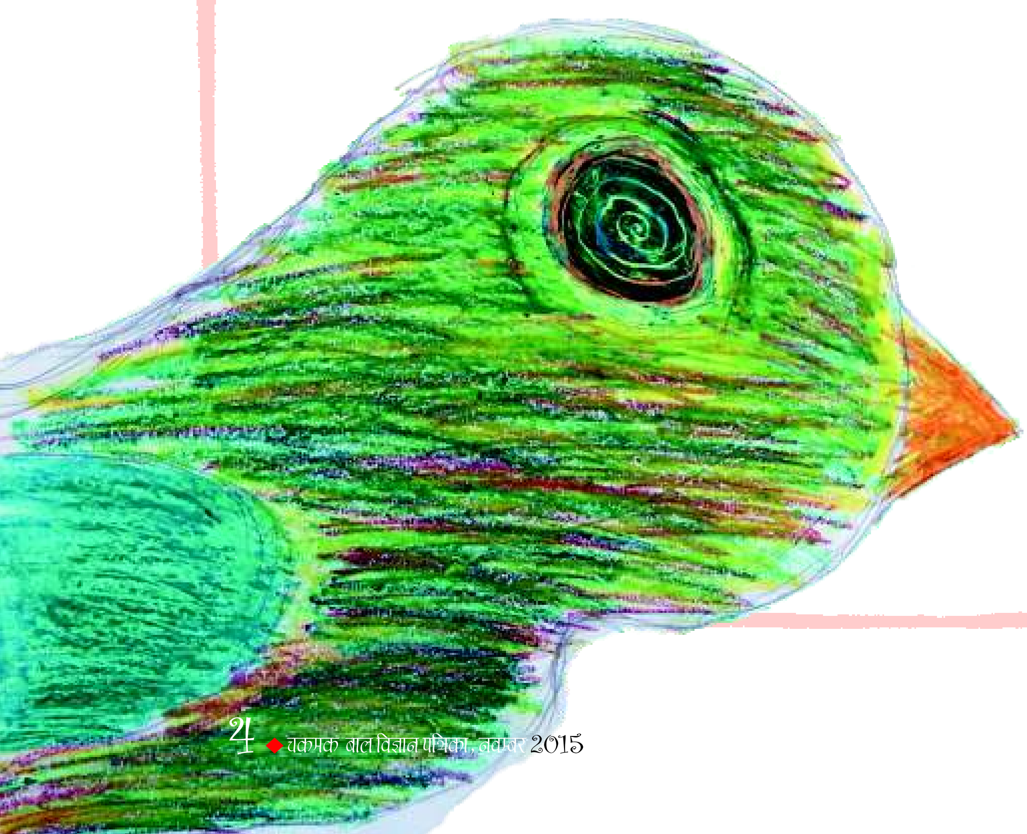

चित्रः बीहू, दस वर्ष, आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल

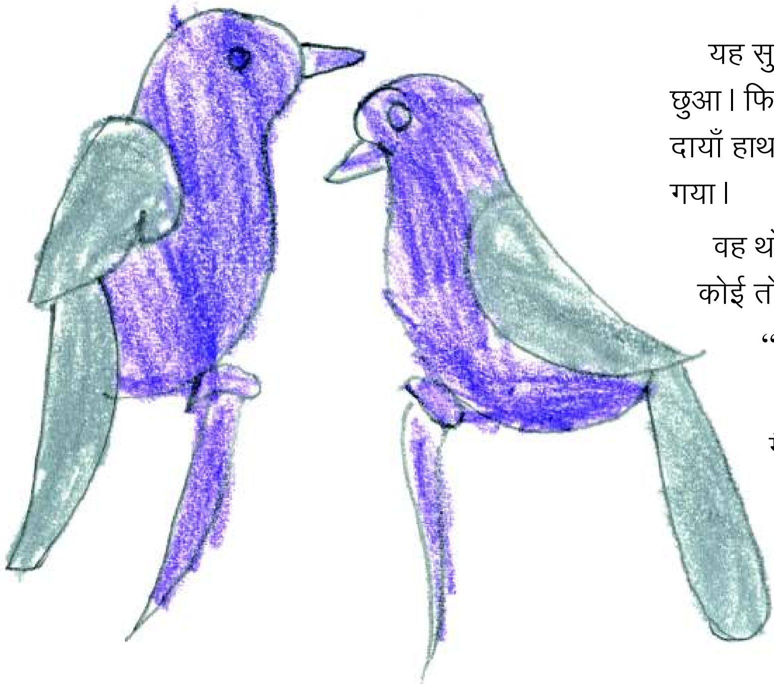

लिखो छुओ

मैं कुछ लिख रहा था और वह पास आकर बैठ गया।

उसने पूछा, "तुम लिखते क्यों हो?"

मैंने कहा कि मैं लिखता हूँ, क्योंकि मैं औरों को छूना चाहता हूँ।

उसने जैसे सही सुना कि नहीं तय करने के लिए पूछा, "तो लिखकर तुम औरों को छू लेते हो?"

"हाँ, मेरा लिखा जब वे पढ़ते हैं तो प्रकाश की किरणें उनकी आँखों तक मेरी छुअन ले जाती हैं।"

"जब मैं बोलता हूँ, मेरी आवाज़ सुननेवालों को मैं छू लेता हूँ, आवाज़ मेरे होठों को उनके कानों तक ले जाती है।"

यह सुनकर उसने अपने कानों को हाथों से छुआ। फिर वह आगे बढ़कर मेरे पास आया और मेरा दायाँ हाथ पकड़कर उसे अपने बाएँ कान तक ले गया।

वह थोड़ी देर सोचता रहा। फिर पूछा, "पर हर कोई तो तुम्हारा लिखा पढ़ता नहीं है?"

"तो?"

वह सोच रहा था। मैंने कहा, "कभी-कभी मैं बस खुद को छूने के लिए लिखता हूँ।"

वह हँस पड़ा। कहा, "खुद को छूने के लिए लिखने की क्या ज़रूरत? उँगलियों से छुओ न?"

"उँगलियों से भी छूता हूँ, पर कभी-कभी लिखकर छूता हूँ।"

"प्रकाश की किरणें तुम्हारा लिखा तुम्हारी आँखों तक ले जाती हैं?"

"हाँ, पर कभी-कभी बिना पढ़े भी मैं अपने लिखे से खुद को छू लेता हूँ।"

वह फिर सोच में पड़ गया। फिर वह दौड़कर सोफे पर चढ़ गया और कूदने लगा। कूदते हुए वह गा रहा था, "लिखो, छुओ, लिखो, छुओ, लिखो, छुओ...।" साथ में मैं भी गाने लगा, "लिखो, छुओ, लिखो, छुओ, लिखो, छुओ...।" चक मक

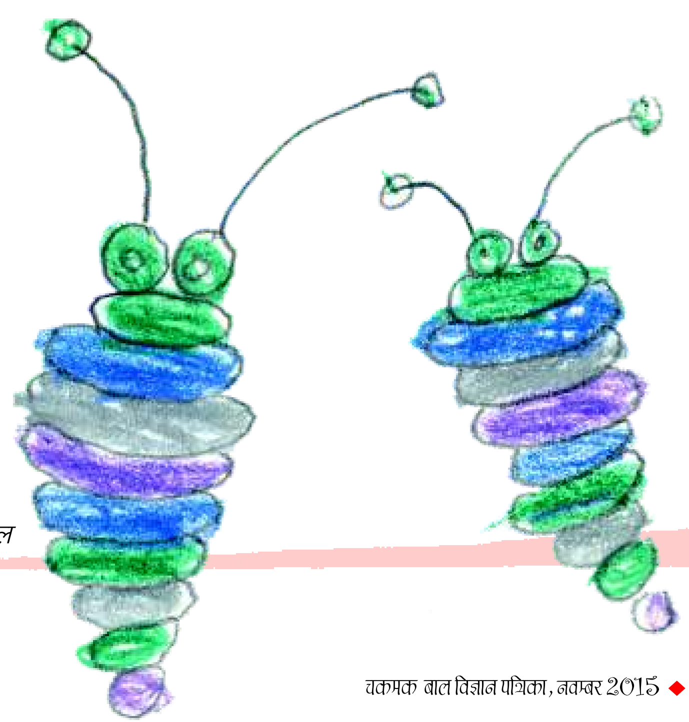

दोनों चित्रः आरव, पाँच वर्ष, भोपाल

अजगर का पेट

अब्दुल बिस्मिल्लाह

गाँव का नाम था बिजौरा और उस लड़के का नाम था लालजी। लालजी पढ़ने में बहुत कमज़ोर था। इसीलिए वह स्कूल जाने से हमेशा जी चुराया करता था। पढ़ने के बदले जंगल जाकर लकड़ियाँ या घास काटने में उसे ज़्यादा आनन्द आता था।

बिजौरा गाँव के लोग गरीब थे। उनके पास इतने पैसे कभी नहीं होते थे कि बाज़ार से वे नकद दामों में सौदा खरीद सकें। अतः गाँव के हर घर का सम्बन्ध बाज़ार के किसी न किसी साहूकार से जुड़ा हुआ था। गाँव के लोग खेती करते थे, लेकिन पहाड़ी पथरीली ज़मीन में इतना अन्न कभी पैदा नहीं होता था कि वे अपना भी पेट भर सकें और साहूकार का भी। जबकि साहूकार का पेट तो उनके पेट से भी बड़ा होता था।

लालजी का पिता जिस साहूकार के यहाँ से उधारी लाता था, उसका पेट तो और भी बड़ा था। उस लम्बी तोंदवाले साहूकार को देखकर लालजी को अक्सर ही गुस्सा आ जाया करता था, क्योंकि वह अक्सर उसके पिता को परेशान किया करता था और कभी-कभी तो भद्दी-भद्दी गालियाँ भी देता था।

लालजी का मन शायद इसीलिए पढ़ने में नहीं लगता था। ज़ाहिर है कि उसकी पढ़ाई के कारण उसके पिता को कुछ ज़्यादा ही परेशान होना पड़ता था और साहूकार की कुछ ज़्यादा ही गालियाँ सुननी पड़ती थीं। लालजी को ये बहुत बुरा लगता था। उसके पिता को कोई फटकारे, वह उसे बर्दाशत नहीं था। शायद इसीलिए वह जंगल में जाकर मेहनत करना पढ़ने की बजाय ज़्यादा ज़रूरी समझता था।

एक बार साहूकार ने जब उसके बाप से कहा था कि अपने लड़के की पढ़ाई पर ध्यान क्यों नहीं देते, तो उसकी इच्छा हुई थी कि साहूकार के पेट को फाड़ डाले ओर कहे कि मेरा पिता पहले तुम्हारा कर्ज़ तो चुका ले, फिर मुझे पढ़ाएगा। लेकिन वह टुकुर-टुकुर सिर्फ देखता रहा था।

लालजी दरअसल काम करना चाहता था। वह सुबह-सुबह उठता और माता-पिता की नज़र बचाकर जंगल की ओर भाग जाता। दोपहर को वहाँ से लौटता तो उसके नन्हें कन्धों पर घास या लकड़ियों का गट्ठर होता, जिसे देख घरवालों की ज़बान

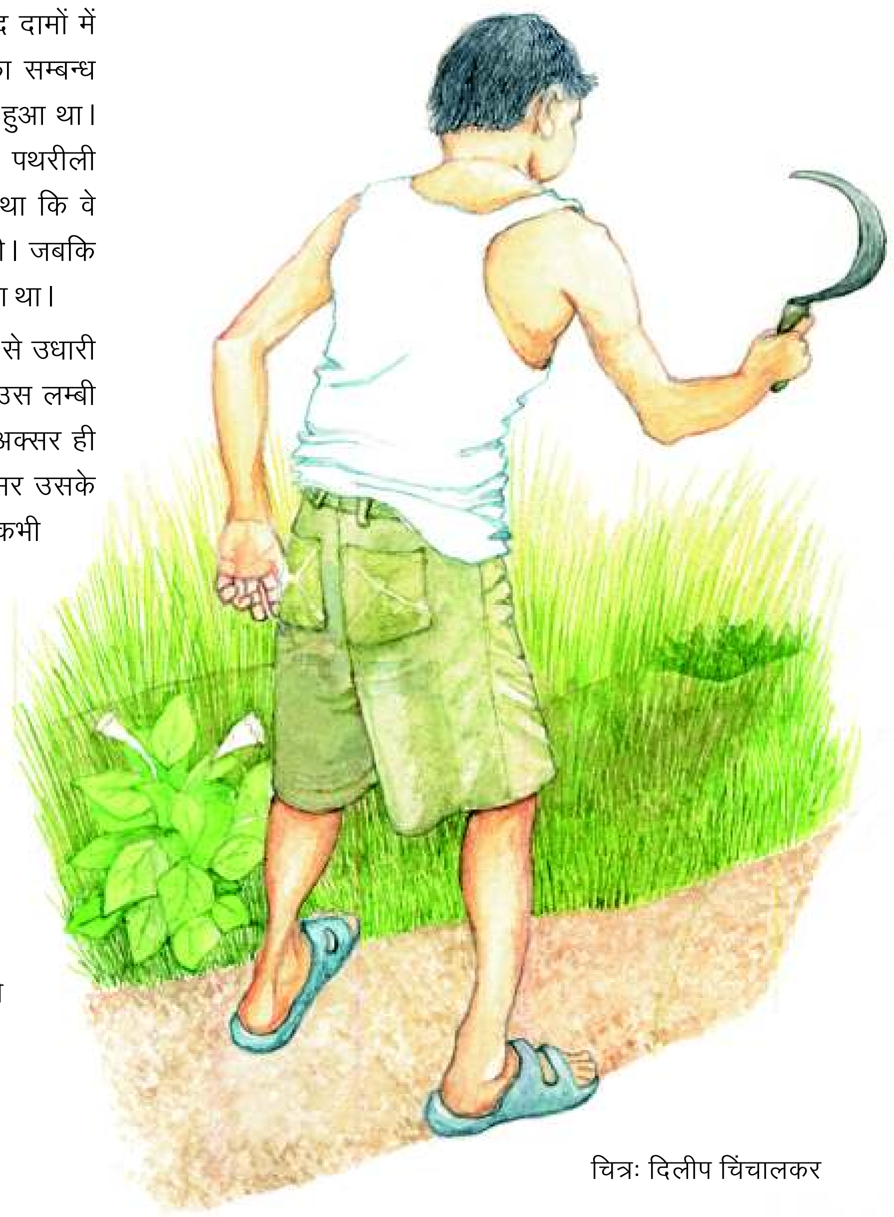

चित्रः दिलीप चिंचालकर

बन्द हो जाती। उसका पिता गट्ठर उठाकर बाज़ार जाता और साहूकार के यहाँ औने-पौने दामों में उसे बेचकर देर रात गए घर लौटता। दूसरे दिन लालजी फिर दूने उत्साह से जंगल की ओर निकल जाता।

एक दिन की बात है कि लालजी घास की खोज में काफी दूर तक निकल गया। दरअसल उस दिन वह छप्पर पर छाने के लिए घास काटने गया हुआ था। बारिश के दिन करीब आ गए थे और गाँव के लोगों ने अपने-अपने छप्परों के लिए घास-पत्ते इकट्ठे करने शुरू कर दिए थे।

चलते-चलते लालजी एक ऐसे घने वन में पहुँच गया, जहाँ चारों ओर ऊँचे-ऊँचे पेड़ राक्षसों के समान खड़े थे और आसपास लम्बी-लम्बी घास उगी हुई थी। इतनी लम्बी घास कि उसका पूरा शरीर ही छिपा जा रहा था। एक क्षण के लिए उसके मन में थोड़ा-सा डर पैदा हुआ, लेकिन अगले ही पल अपनी कमर से हँसिया निकालकर वह घास काटने में जुट गया।

अचानक उसे ऐसा लगा मानो कोई चीख रहा हो! वह खड़ा हो गया। कटी हुई घास को उसने समेटकर रख दिया और अनुमान लगाने लगा कि वह आवाज़ कैसी है और किधर से आ रही है। आवाज़ बेहद खौफनाक और दर्द से भरी थी। उसका नन्हा-सा दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

लेकिन वह हिम्मत करके वहाँ से चल पड़ा। जिधर से चीखने की आवाज़ आ रही थी,लालजी उसी ओर बढ़ा जा रहा था। हठात् वह रुक गया। उसे ऐसा लगा जैसे सामने कोई लेटा हुआ है और उसके भारी-भरकम पेट में कुछ समाया जा रहा है।

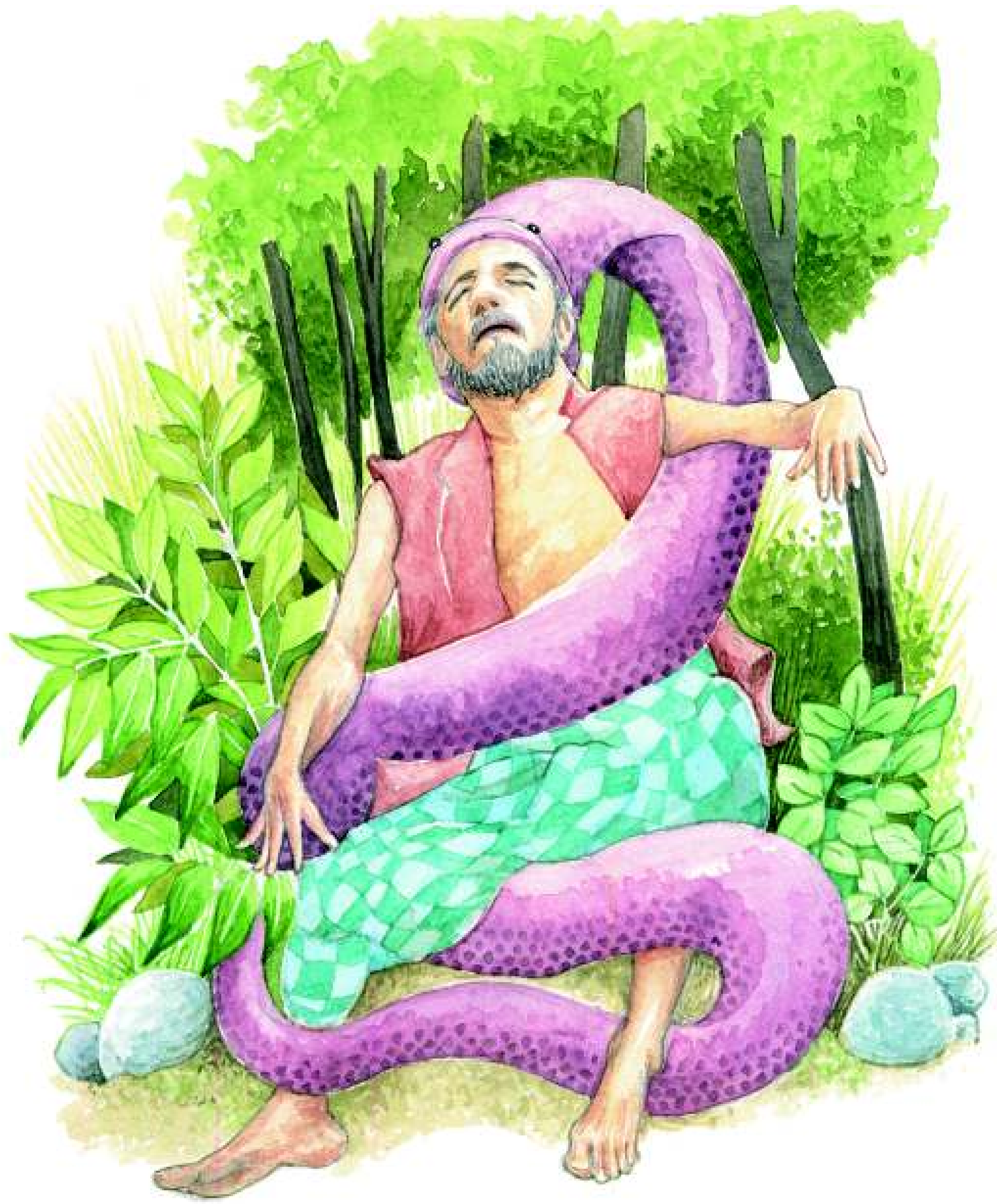

सामने जो दृश्य उसे दिखाई पड़ा वह सन्न कर देने वाला था।

लालजी थोड़ा और आगे बढ़ा। फिर सामने जो दृश्य उसे दिखाई पड़ा वह सन्न कर देने वाला था। एक झाड़ी की छाया में एक बूढ़ा आदमी पड़ा हुआ था और एक अजगर उसे लील रहा था! बूढ़े आदमी की शक्ल उसके पिता की शक्ल से काफी मिल रही थी।

(शेष भाग पेज 42 पर)

अन्दाज़े बयाँ और...

पद्मजा गुनगुन

ट्रेन की खिड़की से मैं बाहर देख रही थी। वहाँ तेज़ी से दृश्य बदल रहे थे। खूब सारे खेत, झोपड़ियाँ, बीच-बीच में बड़े-बड़े पेड़। धीमे-धीमे जब कलकत्ता आना शुरू हुआ मैं वो दो-तीन वाक्य मन ही मन दोहराने लगी जो मैं बांग्ला में बोल सकती थी। पहले देखी तस्वीरों का बंगाल स्मृति से झाँक रहा था।

कुछ ही देर में हम कलकत्ता पहुँच गए। ट्रेन की यात्रा पूरी हुई तो लगा बंगाल तो बहुत पहले ही मुझ तक पहुँच गया था, मैं अब बंगाल पहुँची हूँ।

टिंकू हज़रा द्वारा खींची फोटो

यहाँ आने की योजना लगभग एक महीने पहले बनी थी। पर इसका विचार कोई एक साल पहले आया जब चन्दन और मैंने *द शिप ऑफ थीसिस* नाम की फिल्म देखी थी। उस फिल्म में एक फोटोग्राफर थी जो देख नहीं सकती थी। तो विचार ये आया कि क्यों ना ऐसे ही बच्चों के साथ फोटोग्राफी की जाए! हमने कई केन्द्रों से बात की जो दृष्टिहीन बच्चों के साथ काम करते हैं। पर कहीं मौका नहीं मिला। कुछ लोगों को लगा कि देखने से जुड़ी कोई भी बात उन बच्चों को दुख पहुँचा सकती है। कुछ ने यह कहकर मना कर दिया कि इसमें कोई फायदा नहीं है। कुछ कहते कि ऐसा हो ही नहीं सकता और कुछ क्राफ्ट या म्यूज़िक की क्लास करवाने का सुझाव देते। पर हमें तो यह करना ही था। इसी बीच हमने कुछ ब्लाइंड फोटोग्राफर्स के बारे में भी पढ़ा। उनकी तस्वीरें देखीं, तस्वीरों तक पहुँचने की यात्रा को जानने की कोशिश की।

तो अब यहाँ बंगाल में यह मौका मिल पाया। सिआल्दा स्टेशन पर हम देबला से मिले। वे हमें भीड़ में से होते हुए लोकल ट्रेन की ओर ले जा रही थीं। अब हम सेवड़ाफुली जा रहे थे। देबला को हिन्दी और अँग्रेज़ी नहीं आती थी और हम हमें पता बांग्ला के दो-तीन वाक्य बोल चुके थे। शाम छह बजे हम सोसाइटी फॉर ब्लाइंड सेंटर पहुँचे। और वहाँ रहनेवाले चार बच्चों से मिले। वे चारों एक कमरे में बैठे हुए थे। हम सबने एक-दूसरे को अपना-अपना नाम बताया। मैंने बांग्ला में कुछ बोलने की कोशिश की पर कुछ उल्टा-पुल्टा बोल गई। तब टिंकू ने कहा, "कोई बात नहीं, आप हिन्दी में बोलिए। वे चारों हिन्दी समझते हैं।" इसके बाद चन्दन ने उन्हें बताया कि हम यहाँ फोटोग्राफी कराने आए हैं। अचानक मेरे अन्दर वो सारे सवाल उमड़ आए जो पिछले कई महीनों से एक-एक कर आ रहे थे। मुझे बेसब्री से उनके जवाबों का इन्तज़ार था कि टिंकू बोल पड़ा, "बहुत अच्छा!" फनी बोला, "भालो!" मिलन और अंजन ने कहा, "हाँ करेंगे!" मैं एकदम से हलकी हो गई।

हमारा काम अगले दिन से शुरू होनेवाला था।

मिलन द्वारा खींची फोटो

पहला दिन

सुबह-सुबह चन्दन ने सूरदास को पढ़ा और हम सबने सुना। हमने इस बात पर ज़ोर दिया कि सूरदास देख नहीं सकते थे पर उन्होंने कितने सारे दृश्य लिखे हैं। मेरे मन में कई बातें चल रही थीं। ...कि जैसे मैं सुनते-सुनते भी कई दृश्य देख पा रही हूँ क्या टिंकू, फनी और मिलन भी ऐसे ही देख रहे होंगे या वे इन दृश्यों की ध्वनियाँ सुन पा रहे होंगे या वे इन दृश्यों का स्पर्श याद कर रहे होंगे। एक जगह चन्दन ने पढ़ा "पानी में चाँद की परछाई"। और मुझे पानी में चाँद की परछाई का दृश्य याद आ गया। कुछ देर रुककर मैंने कहा, "चाँद की परछाई..." तो फनी बोला, "हाँ दीदी समझ गए!" और मिलन ने कहा "सूरदास जी की imagination (कल्पना) कमाल है!" मैं बहुत देर तक सोचती रही कि जब भी इन्हें किसी ने परछाई का अर्थ बताया होगा तो कैसे बताया होगा?

मिलन...टिंकू...फनी

परछाई क्या होती है? मेरी परछाई जो ज़मीन पर पड़ रही है, इसका क्या अर्थ है? क्या यह कि मेरे पीछे ऊपर जो सूरज है, उसकी धूप ज़मीन पर गिर रही है। और जब मैं धूप में आकर खड़ी होती हूँ तो मैं सूरज और ज़मीन के बीच खड़ी हूँ। धूप मेरे ऊपर गिरती है और मेरी आकृति जितनी धूप ज़मीन पर नहीं गिरती है। यह आकृति जो अब ज़मीन पर है वो मेरी परछाई है। चाँद के पीछे कोई सूरज है जो वह भी पानी में दिख रहा है? तो परछाई भी कई तरह की है। जैसे शीशे में हम अपनी परछाई देखते हैं तो क्या चाँद

शीशे जैसे पानी में अपनी परछाई देखता होगा? बिना देखे कैसे बताया जाए कि परछाई क्या होती है!

वे अपनी परछाई नहीं देख सकते हैं पर उनकी परछाई वहाँ मौजूद होती है। कभी सड़क पर साथ चलती हुई, कभी उनके आगे लेटी हुई तो कभी शीशे जैसे पानी में चाँद के बहुत पास।

कुछ देर बाद हमने फोटोग्राफी पर बात करनी शुरू की। इस पर भी कि बिना देखे तस्वीरें कैसे ले सकते हैं? सुनकर जानना है, छूकर पता लगाना। वे चारों आपस में बात करने लगे। फिर टिंकू ने पूछा कि आप कहना चाहते हैं कि हमको सुनकर और महसूस करके “अनुमान” लगाना है?

हाँ, हम यही कहना चाह रहे थे! इतना सरल और सही शब्द दे दिया टिंकू ने! अनुमान लगाना है, अनुमान से ही तस्वीरें लेनी हैं।

इस नए तरीके को सीखते हुए बार-बार पिछले सीखे हुए तरीकों को याद करती हूँ जब देखते हुए फोटो खींचना सीखा था। कितनी ही बार मैं भी तो अनुमान ही लगाती हूँ। पेड़ पर हिलते पत्तों की तस्वीर लेते हुए मैं हवा का अनुमान ही तो लगा रही होती हूँ!

दूसरा दिन

अगले दिन हमने लकड़ी के एक खाली फ्रेम के साथ काम किया। फ्रेम को छूकर हम समझने की कोशिश कर रहे थे कि एक फोटो का फ्रेम कैसा होता है और दृश्य किस आकार में फोटो में आता है।

फ्रेम से शुरू करके हम कैमरे की ओर बढ़े। टिंकू, मिलन, फनी और अंजन पहली बार कैमरे से मिलनेवाले थे। मैंने चारों को एक-एक छोटा कैमरा दिया। वे उसे हाथ में लेकर कुछ देर बैठे रहे। कैमरा उन्हें देखता रहा। कैमरे का on/off बटन छूकर याद कर लिया और on/off की आवाज़ सुनकर याद कर ली। फिर क्लिक का बटन छुआ। क्लिक का बटन दबाया, उसकी आवाज़ सुनी और अपनी पहली फोटो खींची!

हमको सुनकर और महसूस करके “अनुमान” लगाना है और अनुमान से ही तस्वीरें लेनी हैं।

फनीपाल द्वारा खींची फोटो

मिलन द्वारा खींची फोटो

वे चारों उस शाम खूब सारी तस्वीरें खींचते रहे। हमसे पूछते कैमरे में क्या दिख रहा है? कैसा दिख रहा है? तस्वीर दिखाते हुए पूछते कैसा आया है? (हमें एक बार फिर *द शिप ऑफ थीसिस* की फोटोग्राफर याद हो आई। अपने मित्र को अपनी तस्वीरों में क्या दिख रहा है पूछती हुई।) हम सभी उस दिन लगातार तस्वीरें लेते रहे, खुश होते रहे! अपनी तस्वीरें दिखाते हुए टिंकू ने पूछा, "दीदी, पर ये जो फोटो मैंने लिया, वो मैंने तो देखा ही नहीं।" मैंने कहा, "पर मुझे ये दिखाया तो तुम्हीं ने है।" तो टिंकू ने कहा, "जो दृश्य हमारे मन में होगा उसका फोटो हम खींचेंगे।"

तीसरा दिन

तीसरे दिन हम सब चन्दन नगर गए और वहाँ गंगा के किनारे की तस्वीरें लेते रहे। हमने तय किया कि आज उन्हें खुद ही सुन-सुनकर सोचने दें कि क्या खींचना है और क्या नहीं। बीच-बीच में कुछ सुनने पर समझ ना आए तो वे पूछते, "ये क्या है?" "वहाँ क्या है?" बहुत सारी चीज़ें तो मैं उनका सुना हुआ पूछने से ही देख पाई।

अंजन ने फोटो खींचते हुए कहा कि लग रहा है जैसे कोई सपना देख रहा हूँ।

शाम को सेंटर लौटकर हमने लैपटॉप पर सुबह खींची हुई तस्वीरें देखीं। कुछ देर उँगली से स्क्रीन छुआकर बताने की कोशिश की कि फ्रेम में कहाँ पर क्या आया है। इस तरह मैं और चन्दन तस्वीरों में बस आउटलाइन्स देखते रहे।

हमें अकसर दृश्य, ध्वनि, स्पर्श याद रहते हैं पर क्या फोटो को यूँ सुनकर जानना भी वैसे ही याद रहता होगा जैसे कोई देखा हुआ फोटो याद रहता है। यूँ फोटो को बोलकर बताना मेरे लिए कुछ मुश्किल रहा। तस्वीर में तो इतनी चीज़ें हैं वे सभी बोलकर नहीं बताई जा सकती हैं। पर फिर भी हम पूरी कोशिश कर रहे थे कि सुनकर ही सही वे अपनी तस्वीरों को ज़्यादा से ज़्यादा जान पाएँ। अब दो चीज़ें हो रही थीं – एक तो यह बताना कि फोटो खींचते वक्त सामने क्या है जो कि अगले ही पल बदल जाता था और दूसरा यह कि फोटो में कौन-सा पल आया। खूब सारे सवाल साथ में बांग्ला के नए-नए सीखे जा रहे शब्द।

एक सवाल मन में आया कि अगर मैं देखकर और मिलन सुनकर फोटो खींचे तो क्या वो एक-सी आएँगी?

दोनों फोटो फनीपाल ने खींची हैं

चौथा दिन

अगले दिन हम सब गंगा किनारे गए। वहाँ घाट पर, बाज़ार में और एक मन्दिर में तस्वीरें खींचीं। घाट पर बैठे हुए सामने गंगा को सुना, गुज़रती नावों और स्नान के लिए आए लोगों की आवाज़ें सुनीं। आवाज़ों की तस्वीरें खींचीं। फनी फोटो खींचता तो उसके आसपास लोग इकट्ठा हो जाते। वह उनसे बातें करता रहता और उनकी तस्वीरें खींचता जाता। फनी ने उस दिन खूब पोट्रेट खींचीं।

लौटते हुए बाज़ार में खूब शोर मिला। किसी की बात सुननी हो तो पास जाकर सुननी होती। सब्ज़ीवाले के पास जाते तो उसकी बात समझ में आती। तब खिलौनेवाले की आवाज़ कम हो जाती। शोर को मैं देख भी रही थी और सुन भी रही थी। यानी सुनने और देखने दोनों में एक ही चीज़ समझ आती – शोर। अचानक एक सवाल आया कि अगर मैं देखकर और मिलन सुनकर फोटो खींचे तो क्या वो एक-सी आएँगी?

दो दिन हमारे साथ दुलाल भी रहा। वो उम्र में इन चारों से बड़ा है। उसने बताया कि वह 50 फीसदी देख सकता है। सब कुछ का आधा दिखना कितना होता है मैं समझ नहीं पाई तो उसने बताया कि खूब रोशनी में वो कुछ चीज़ें देख पाता है। दुलाल ने भी तस्वीरें खींचीं।

इस तरह अब हम रोज़ अलग-अलग जगह जाकर तस्वीरें खींचते रहे। मिलन ने एक बार फोटो खींचते हुए कहा कि लग रहा है जैसे मैं कैमरे से फोटो खींचते हुए सब देख पा रहा हूँ। आठ दिनों की कार्यशाला के बाद चन्दन और मैं लौट आए। बेहद सुन्दर आठ दिन! पाँचों ने अपने आसपास को सुनकर, छूकर, कैमरे से देखा है। ये तस्वीरें हम जो देखते हैं और ये बच्चे जो अनुमान लगाते हैं, इन बातों को किसी एक बिन्दु पर मिलाती-सी लगती हैं।

शोर बरपा है...

आमोद कारखानिस

शिवोहम तिवारी, तीसरी, सरदार पटेल विद्यालय, नई दिल्ली

मेरे घर से चार-पाँच घर दूर एक स्कूल है। वहाँ दो शिफ्ट चलती हैं। दोनों की शुरुआत प्रार्थना से होती है। जो मुझे एकदम साफ सुनाई देती है। लाउडस्पीकर पर होती है ना! इसके अलावा शनिवार को पीटी पीरियड होता है। कभी डाँस की प्रैक्टिस होती है कभी और कुछ। एक दिन मैंने स्कूल जाकर वहाँ के शिक्षकों से पूछा कि क्या आपके स्कूल में बच्चों को सुनाई कम आता है या उन्हें प्रार्थना, राष्ट्रगीत याद नहीं होते? ज़ाहिर है मास्साब बुरा मान गए।

हमारे देश में अनगिनत मौकों पर लाउडस्पीकर का एकदम बेज़ा इस्तेमाल होता है। त्योहार, शादियाँ, कथाएँ, ताज़िए, पार्टियाँ... इसके अलावा 15 अगस्त और 26 जनवरी भी तो उत्सव ही हैं। बारिशों के बाद तो त्योहारों का जैसे ताँता लग जाता है – गणेशोत्सव, ईद, नवरात्रि, दशहरा, दीवाली, क्रिसमस...। ऐसे मौकों पर पटाखे फोड़े जाते हैं, डीजे या बैण्ड बजता है यानी धमाल ही धमाल! और शायद लाउडस्पीकर या एम्प्लीफायर में आवाज़ कम-ज़्यादा करनेवाले बटन को तो लोग भूल ही गए हैं। क्या तुमने सोचा है कि इन सब में हम कितना शोर पैदा करते हैं? और हमारा यह मज़ा दूसरों को तकलीफ भी दे सकता है? त्यौहारों का सीज़न चल ही रहा है। तो क्यों न इस बार हम आसपास के कानफाड़ू शोर का अन्दाज़ा लगाने की कोशिश करें...

वैसे तो शोर को डीबी मीटर से मापा जाता है। पर यह आम लोगों की पहुँच से बाहर की चीज़ है। हमारी पहुँचवाले एंड्रॉयड फोन की कई ऐप्लीकेशन (साउंड मीटर, डेसिबल) से भी शोर का स्तर नापा जा सकता है। इन्हें आसानी से डाउनलोड किया जा सकता है। अगर यह भी पहुँच में नहीं तो कोई बात नहीं। हम अपना शोर मापन यंत्र खुद बनाते हैं। बस अपने एक दोस्त को बुला लो! और उसके साथ किसी ऐसी जगह चले जाओ जहाँ लाउडस्पीकर पर गाना या कुछ और बज रहा हो। लाउडस्पीकर के एकदम पास जाकर एक दूसरे से सामान्य आवाज़ में कोई बात करो।

क्या तुमको ठीक से सुनाई दे रहा है?

फिर धीरे-धीरे कदम गिनते-गिनते उस जगह से दूर चले जाओ। कितनी दूर जाने के बाद तुम सामान्य बातचीत कर पा रहे हो यह नोट करो। यह भी नोट करो कि गाने की आवाज़ न के बराबर सुनाई देने के लिए तुमको कितने कदम दूर जाना पड़ा।

तुम यह भी देख सकते हो कि कार्यक्रम की जगह से दूर जाते समय बीच में कोई झाड़ी या दीवार आने से क्या कोई फर्क पड़ता है? इस पर भी गौर करना कि क्या लाउडस्पीकर की आवाज़ कम करने से समारोह में कोई कमी आ सकती है?

अपने अनुभव और विचार हमें ज़रूर भेजना... इन्तज़ार रहेगा।

(शेष पेज 42 पर)

चित्रकल्पना : शशिकिरण

टॉमी के बाद फिर से कुत्ता पालने का ख्याल मन में नहीं आया। पर जब से गोविन्दो दूसरी क्लास में चला गया था तब से सब कुछ थोड़ा बोरिंग-सा हो चला था। और जब मेरे चचेरे भाई ने टिप्पू को हमारे यहाँ रखने की बात कही तो अचानक फिर से कुत्ता पालने की बात मन में घर कर गई।

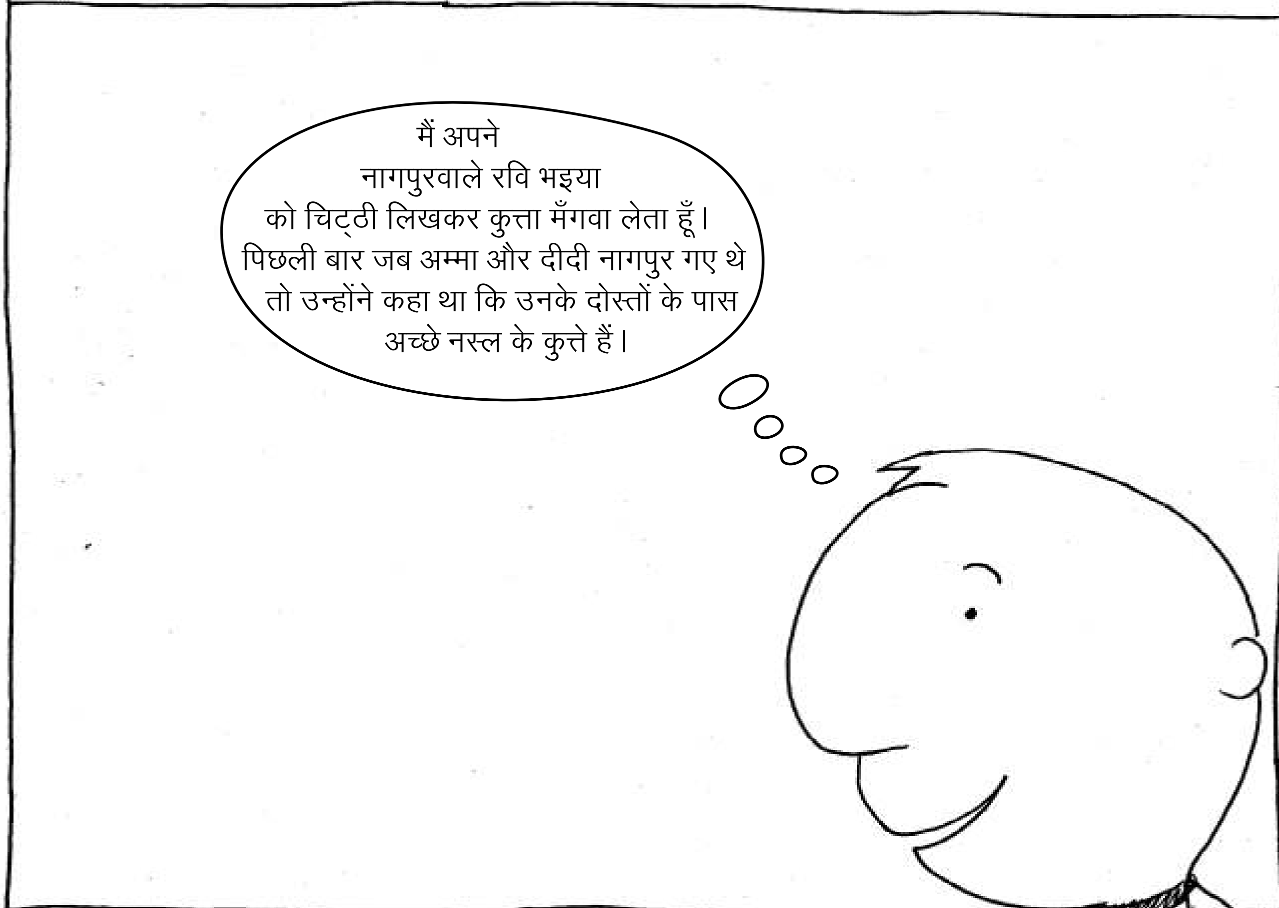

और मैंने फौरन एक लम्बी-सी चिट्ठी लिख डाली।

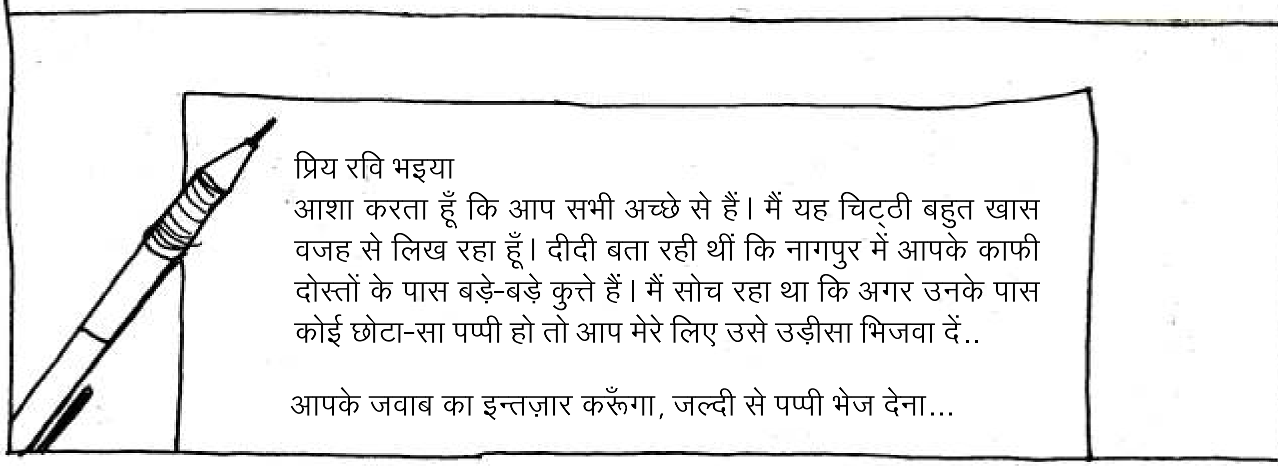

फिर कई हफ्तों तक जवाब का इन्तज़ार करता रहा।
मेरे लिए कोई चिट्ठी आई क्या?
नहीं तो, किसकी चिट्ठी का इन्तज़ार है? चलो हाथ-मुँह धो लो। खाना गरम कर रही हूँ आकर खा लो।
लगता है भइया को पत्र नहीं मिला या फिर उनके दोस्तों के पास नहीं होगा! फिर भी जवाब आ जाता तो अच्छा होता। लगता है अब तो पिताजी को ही बोलना पड़ेगा। कुत्ता आ जाएगा तो मैं रात भर बिना डर के पढ़ सकता हूँ। साथ में वो रात में घर की रखवाली भी कर सकता है।
सर्दियों के दिन पास थे और कुत्ते इसी समय तो बच्चे देते हैं। यानी मुझे जल्दी ही पता कर लेना था कि अच्छी नस्ल का कुत्ता कहाँ पर मिलता है।
अच्छा यार तुझे पता है डॉबरमैन कहाँ मिलता है?
?
अम्मा तुम्हें पता है डॉबरमैन कहाँ मिलता है?
?
अंकल आपको पता है कुत्ते के बच्चे कहाँ मिलते
?

लगातार पूछताछ के बाद स्कूल में एक पते की खबर मिली।
हमारे राउरकेला वाले चाचा के पड़ोसी के घर चार बच्चे हुए हैं तो जाकर ले आ अपने लिए।
अगले ही दिन, मैंने अपने मौसेरे भाई प्रकाश और उनके दोस्त बालाजी को मुझे राउरकेला ले जाने के लिए मना लिया। भइया के साथ साइकिल पर जाने की इजाज़त आसानी से मिल जाती थी।
लगभग दस किलोमीटर साइकिल चलाकर हम आखिरकार सही पते पर पहुँच ही गए।
वहाँ हमारी मुलाकात बड़ी मूछोंवाले एक अंकल से हुई।

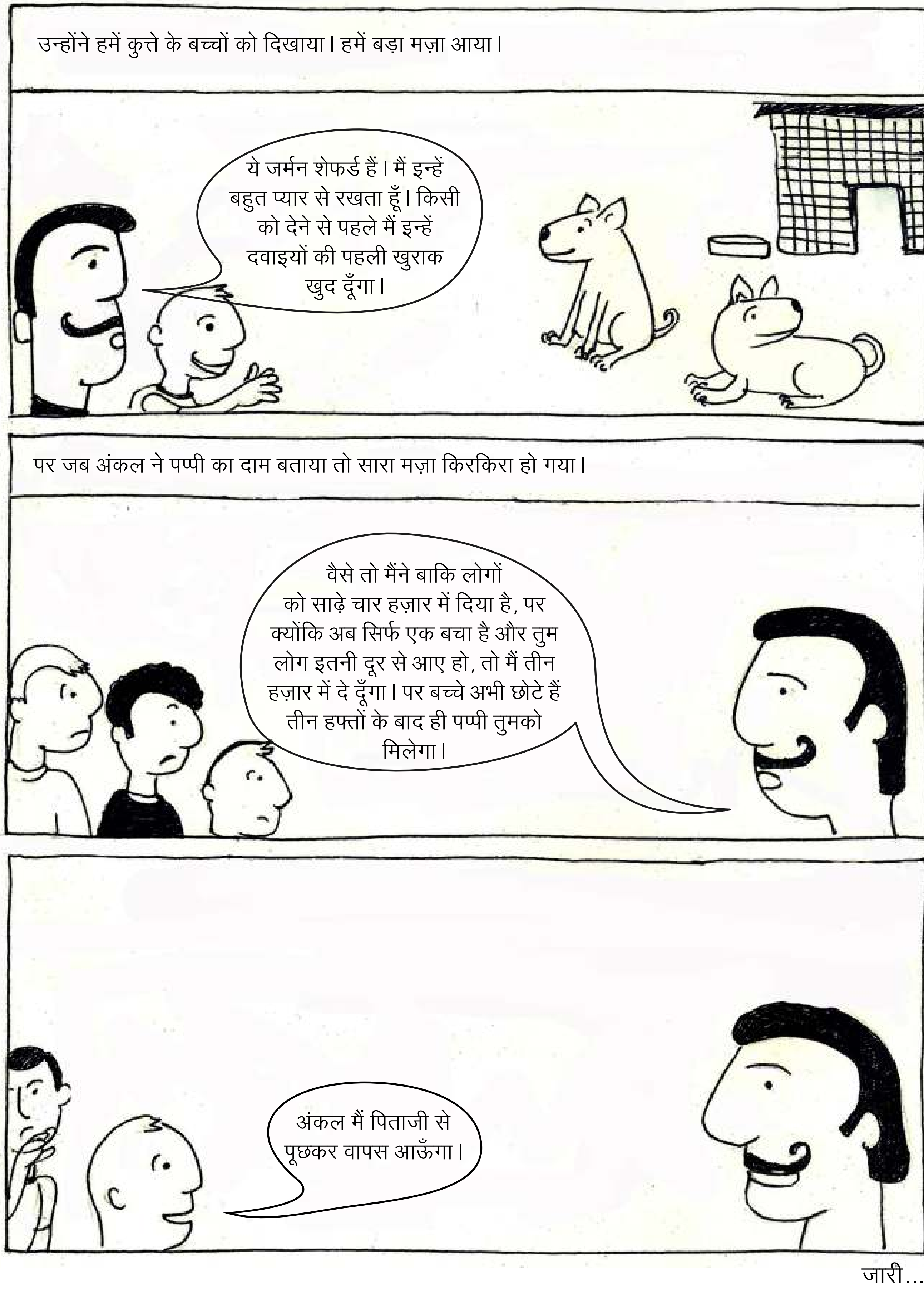
उन्होंने हमें कुत्ते के बच्चों को दिखाया। हमें बड़ा मज़ा आया।
ये जर्मन शेफर्ड हैं। मैं इन्हें बहुत प्यार से रखता हूँ। किसी को देने से पहले मैं इन्हें दवाइयों की पहली खुराक खुद दूँगा।
पर जब अंकल ने पप्पी का दाम बताया तो सारा मज़ा किरकिरा हो गया।
वैसे तो मैंने बाकि लोगों को साढ़े चार हज़ार में दिया है, पर क्योंकि अब सिर्फ एक बचा है और तुम लोग इतनी दूर से आए हो, तो मैं तीन हज़ार में दे दूँगा। पर बच्चे अभी छोटे हैं तीन हफ्तों के बाद ही पप्पी तुमको मिलेगा।
अंकल मैं पिताजी से पूछकर वापस आऊँगा।

जारी...

आलस के मारे वो तीनों वहीं के वहीं बैठे थे। क्या शानदार छुट्टी का दिन था वो...!

विकास अग्रवाल

सुबह चिरूर-चिरूर शाम चिरवाक-चिरवाक

सर्दियाँ अभी शुरू हुई होने को है। यह चिड़ियों से मिलने का बढ़िया वक्त होता है। शहर से थोड़ा बाहर किसी शान्त, पानीवाली जगह पर निकल आओ तो कितनी ही चिड़ियाँ मिल जाती हैं! कुछ मेज़बान और कुछ सर्दियाँ बिताने आईं मेहमान। एक सुबह अपने बेटे श्रीकान्त और दोस्त रुपेश के साथ मैं अपने शहर रायपुर से बाहर निकला। हम परसादा गाँव पहुँचे तो मन खुश हो गया। दूर-दूर तक हरे-भरे बड़े-बड़े पेड़ थे। तालाब किनारे बच्चे मज़े कर रहे थे। हमने भी गले में कैमरा लटकाया और मेहमान चिड़ियों को तलाशने लगे।

तालाब में खूब सारी लेसर विस्लिंग बत्तखें तैर रही थीं। हम उनकी फोटो खींचने में मसरूफ हो गए। इतने में पास के पेड़ में कुछ हलचल महसूस हुई। पास जाकर गौर से देखा तो खुशी का ठिकाना न रहा। वहाँ तीन स्पॉटिड उल्लू बैठे थे। एक-दूसरे से सटे हुए। अमूमन ये रात में सक्रिय होते हैं। पर कभी-कभी दिन में भी दिख जाते हैं, जैसे मुझे दिखे। दिन में जो इन्हें छेड़ दो तो अपने सिर को हलका-सा झटका देते हुए ये आपको घूरने लगते हैं। जैसे मुझे घूर रहे थे। रोशनी बहुत कम थी फिर भी मैंने खटाखट-खटाखट कई फोटो खींच लीं। वो इतने प्यारे लग रहे थे कि मन वहाँ से जाने को नहीं कर रहा था। हम वहाँ लगभग एक घण्टा रहे।

स्पॉटिड उल्लू कटिबन्धीय एशिया में अकसर खुली जगहों में पाए जाते हैं। ये छोटे समूहों में पेड़ की खोखलों/चट्टानों या बड़ी इमारतों की दरारों में अपने घर बनाते हैं। अकसर छोटे पक्षी इन्हें दिन में चैन से बैठने नहीं देते और खदेड़ते रहते हैं। ये जहाँ हों वहाँ सुबह-सुबह और सूरज ढलने के एकदम बाद चिरूर-चिरूर-चिरूर-चिरवाक-चिरवाक की इनकी तीखी आवाज़ सुनी जा सकती है। छोटे कीड़े-मकौड़े, चूहे, चमगादड़, मेंढक, साँप इन्हें बहुत भाते हैं। नवम्बर से अप्रैल के बीच अण्डे देना और बच्चे निकलना होता है। एक बार में ये 3-5 अण्डे देते हैं।

जाते-जाते एक बार फिर मैं उस पेड़ के पास गया। आलस के मारे वो तीनों वहीं के वहीं बैठे थे। मैंने उन्हें मन भर शुक्रिया कहा। मुस्कराया और चला आया। क्या शानदार छुट्टी का दिन था वो...।

चक मक

हमने पकाई है एक डायरी... तुम्हारे लिए!

आकर्षक चित्रों से सजे-धजे डेढ़ सौ पन्ने

इसका नाम है - दुबलीचींटी सबसे आगे थी...

यह डायरी बहुत ही दोस्ताना स्वभाव की है। तुम्हारे पास आते ही तुमसे बातें करेगी...रोज़-रोज़ तुम्हारे ही पड़ोस की नई-नई चीज़ों से, लोगों से मिलवाएगी। तुम्हारे साथ चाँद-तारे निहारेगी। तुम्हें चित्र बनाने के लिए नए-नए विषय सुझाएगी। कई बातें होंगी जो तुम अब तक किसी को नहीं बताते होगे...तुम इस डायरी से साझा कर सकते हो।

फरवरी

आज रात का आसमान रोज़ बदलता है। कई तारे और ग्रह कभी दिखते हैं, कभी नहीं। कुछ तो अपनी जगहों से ही सरक जाते हैं। चाँद तो इस मामले में बड़ा उस्ताद है। कभी गोल-गोल, कभी फाँक-फाँक।

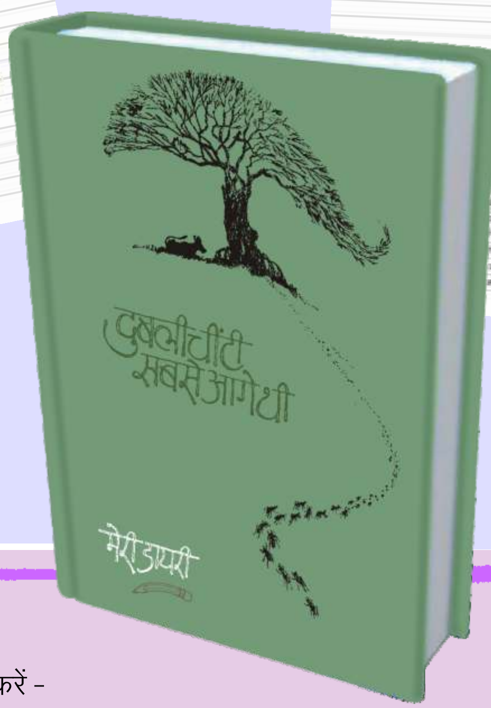

अप्रैल 2015 से मार्च 2016 की इस डायरी को मँगाने के लिए सम्पर्क करें -

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी
शिवाजी नगर, भोपाल - 462016 (म.प्र.)
फोन - 09425010115, 0755 - 2671017, 4252927
email - chakmak@eklavya.in, pitara@eklavya.in www.chakmak.eklavya.in www.eklavya.in

कीमतः 150 रुपए
डाक खर्च अतिरिक्त
10 से अधिक प्रतियों का डाक खर्च हम देंगे
भुगतान एकलव्य के नाम से बने चैक/मनिऑर्डर/ड्राफ्ट द्वारा भेजें।
www.pitarakart.in से भी इसे मँगाया जा सकता है।

भाषा आइकन की

इन्द्राणी रॉय

अपने सोशल नेटवर्किंग साइट पर पिताजी ने अपनी खींची हुई एक सुन्दर तस्वीर पोस्ट की। थोड़ी देर में उनके ग्रुप से कई सारे अँगूठे नज़र आने लगे। पिताजी ने सब से पूछा कि आप लोग मुझे ठेंगा क्यों दिखा रहे हो? ठेंगा दिखाकर वैसे तो किसी की बेइज़्ज़ती की जाती थी, पर आजकल की बात और है। तुम्हारे पोस्ट पर जितने अँगूठे दिखेंगे तुम उतने ही खुश!

आइकन (icons) या इस तरह के चिन्हों के पीछे अलग ही कहानी है। वैसे तो हमें लग सकता है कि ये सिर्फ चित्र ही हैं। और चित्र कोई शब्द नहीं जिसका मतलब हर भाषा में अलग हो। इस अँगूठे को ही ले लो। अमरीका में कोई तुम्हारी किसी बात पर अँगूठा दिखाए तो इसका मतलब उसे तुम्हारी बात बहुत अच्छी लगी। और वो तुम्हें कह रहा है बहुत बढ़िया, चलाते जाओ। पर अपने यहाँ अँगूठे के संकेतार्थ (connotation) इससे बिलकुल अलग हैं। अँगूठा छाप होना या अँगूठा दिखाना कतई अच्छा नहीं माना जाता है।

आइकन भी भाषा की तरह ही सूचना देने का ज़रिया है और बहुत ही महत्वपूर्ण ज़रिया है। वेबसाइट, स्मार्टफोन और कई अन्य स्थितियों में लिखित भाषा के इस्तेमाल के बगैर, आइकन से बहुत कुछ कहा जा सकता है। इसलिए भले ही कोई अँग्रेज़ी में लिखे हुए अक्षर न पढ़ पाए वो आइकन को देखकर स्मार्टफोन का इस्तेमाल कर लेगा। विदेश में भाषा न जानते हुए भी आइकन देखकर खाना मिलने की जगह या शौचालय आदि का पता लग सकता है।

पर कभी-कभी आइकन के अर्थ को समझने में गड़बड़ी हो जाती है। तब जब हम किसी नई चीज़ के आइकन को देखते हैं या फिर तब जब हम कुछ ऐसा देखते हैं जिसका मतलब हमारे लिए अलग हो। जैसा अँगूठे के आइकन के साथ हुआ। यह गड़बड़ी इसलिए हुई क्योंकि आइकन बनानेवाले और आइकन देखनेवाले का सांस्कृतिक परिवेश अलग है। अलग-अलग संस्कृति और समुदायों के अलग-अलग तौर-तरीके और कहानियाँ होती हैं। इनसे हमारे सोचने के तरीके बनते, बदलते हैं।

तुमने कई जगह यह आइकन देखा होगा,

इसे संगीत या ध्वनि के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसे देख-देखकर अब तुम पहचानने भी लगे होगे। पर इस आइकन के साथ भारतीय संगीत या ध्वनि का कोई सम्बन्ध नहीं है। सिर्फ पाश्चात्य संगीत में ही सुरों के ये चिन्ह इस्तेमाल होते हैं। इसलिए सम्भव है कि हमारे यहाँ के लोग इसे न समझ पाएँ।

एक ऐसा ही किस्सा है जापान में छेड़ी गई एक विज्ञापन मुहिम का। एक अमरीकी कम्पनी ने नवजात शिशुओं की एक सामग्री के पैकेट के ऊपर, मुँह में एक गठरी लिए एक सारस पक्षी की तस्वीर इस्तेमाल की। कुछ महीनों बाद उस कम्पनी ने देखा कि उनकी सामग्री जापान में उतनी नहीं बिक रही है। मार्केट रिसर्च करवाने पर पाया गया कि लोग नवजात शिशु के साथ सारस की तस्वीर का सम्बन्ध समझ नहीं पा रहे थे। अमरीकी लोककथाओं के अनुसार नवजात शिशु को सारस गठरी में बाँधकर माता-पिता तक पहुँचाते हैं। पर जापानी इस कहानी से अपरिचित थे इसलिए इस तस्वीर का कोई अर्थ नहीं निकाल पाए।

एक और ऐसा पक्षी है जिसके बारे में विश्वास बड़े ही विविध हैं। वो है उल्लू। अकसर कक्षा में कम नम्बर लानेवालों को उल्लू बोला जाता है। तुम अपने दोस्तों को चकमा देकर उल्लू बनाते होगे! तुम्हें कोई उल्लू कहे तो कितना गुस्सा आएगा! अब मान लो कि तुम अमरीका से कोई ऑनलाइन कोर्स कर रहे हो और तुम देखते हो कि तुम्हारे नाम के आगे एक उल्लू का आइकन लगा दिया गया है तो तुम्हें कितना बुरा लगेगा, है न? पर तुम्हें खुश होना चाहिए क्योंकि अमरीका में उल्लू को बेवकूफ नहीं बल्कि बुद्धिमान माना जाता है। वहाँ अकसर कहा जाता है As wise as an owl और अच्छे छात्रों के नाम के आगे उल्लू का आइकन लगाना आम बात है। चकमक

रस्सी से पानी खींचें...

अंकुश

नहीं भाई, इसके लिए कुएँ पे जाने की ज़रूरत नहीं! घर में ही हो जाएगा। बस दो बर्तन ले लो (जैसे गिलास, कटोरी, बालटी, मग्गा या लोटा)। एक में पानी भरकर थोड़ी ऊँची जगह पर रख दो। दूसरे खाली बर्तन को उसी के पास कहीं नीचे रख दो। अब किसी सूती रस्सी, नाड़े या मोटे धागे के एक सिरे को भरे हुए बर्तन में इस तरह डाल दो कि वो उसकी तली को छू जाए। इसका दूसरा सिरा खाली बर्तन में रहेगा। कुछ देर में भरे हुए बर्तन का पानी खाली बर्तन में आ जाएगा।

अब तुमको पता लगाना है कि इस तरह से क्या गन्दे पानी को भी साफ किया जा सकता है? यानी अगर ऊपर रखे बर्तन में मिट्टीवाला गन्दा पानी है तो क्या नीचेवाले बर्तन में साफ पानी इकट्ठा होगा? अपने अनुभव हमसे ज़रूर साझा करना। एक बात और...क्या सूती रस्सी के अलावा किसी और रस्सी से भी ऐसा सम्भव है? चकमक

चित्र : दिलीप चिंचालकर

एक और पहेलीः सक्लेशपुर की रेल यात्रा

मनीष जैन

बैंगलोर को मैंगलोर से जोड़नेवाला रास्ता पश्चिमी घाट के बेहद घने और खूबसूरत जंगलों और पहाड़ों से गुज़रता है। इस रेल मार्ग में सक्लेशपुर और कुक्केसुब्रमण्यम स्टेशन भी आते हैं। 2005 के आसपास इनके बीच रेल सेवा किसी वजह से बन्द थी। 52 किलोमीटर लम्बी इस रेल पटरी पर 58 सुरंगें, 109 पुल और 25 झरने पड़ते हैं। मैंने अपने एक दोस्त सन्तोष कुमार के साथ इस पटरी पर पैदल चलने का प्रोग्राम बनाया। तय दिन हम बस से सक्लेशपुर पहुँचे और रेल पटरी पर यात्रा शुरू कर दी।

पटरियों के ऊपर पुल पार करना बहुत रोमांचकारी था। क्योंकि 1000 फीट नीचे बहती नदी को देखकर कलेजा मुँह को आ जाता था। पर असल घटना तो अभी बाकी थी।

दोपहर के बाद जब हमने एक सुरंग का 7/8 हिस्सा पार कर लिया था कि दूर से 16 किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से आती रेल दिखाई दी। हमें पता था कि सवारी गाड़ी का आना-जाना बन्द है पर यह नहीं पता था कि मालगाड़ी चल रही है। अजब स्थिति थी। सुरंग में इतनी जगह नहीं होती है कि रेल के साथ आदमी भी चल सके। बचने के लिए हमें रेल से पहले सुरंग से बाहर निकलना था।

हमने तुरन्त तय किया कि हममें से एक के बचने की उम्मीद इसी में ज़्यादा है कि सन्तोष रेल की दिशा में और मैं उलटी दिशा में दौड़ूँ। अगर दोनों साथ-साथ एक ही दिशा में दौड़ते तो दोनों का अंजाम एक ही होता। खैर, हमारा सोचना सही रहा। हम दोनों बाल-बाल बचे।

अब तुम्हें बताना है कि हमारे भागने की गति कितनी थी। यह मान लें कि सन्तोष और मेरी गति बराबर थी।

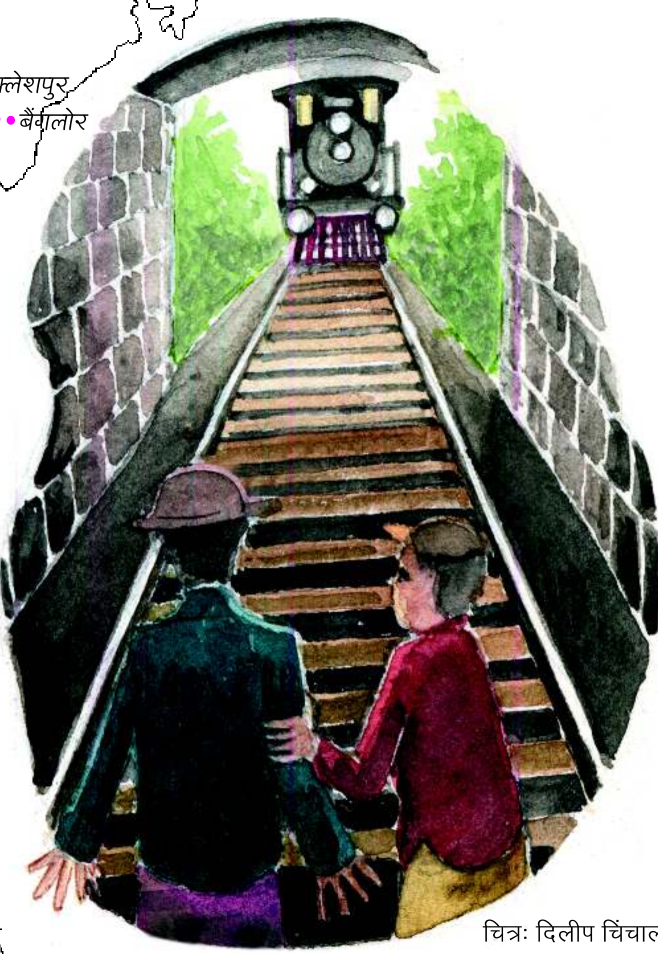

चित्रः दिलीप चिंचालकर

जब हमने रेल को देखा तो हमने 7/8 सुरंग पार कर ली थी। उस जगह से सन्तोष रेल की दिशा में दौड़ा और मैं संतोष की ही रफ्तार से उल्टा दौड़ने लगा। जैसे ही सन्तोष सुरंग के अन्त तक पहुँचा रेल सुरंग में घुसी। तब तक मैं भी उलटी दिशा में सन्तोष जितना ही भागा था। इसलिए जब रेल सुरंग में घुसी तो रेल मुझसे 2/8 पीछे थी। अब उस जगह से रेल और मैं दोनों एक ही दिशा में दौड़ रहे थे। और दोनों एक साथ ही सुरंग से बाहर निकले। तो जितनी देर में मैंने सुरंग की 6/8 दूरी तय की रेल ने उतने ही समय में पूरी सुरंग की लम्बाई तय की। इसलिए मेरी और रेल की गति भी उसी अनुपात में होनी चाहिए। 6/8:1 यानी 6:8 यानी 3:4 अब रेल की गति 16 किलोमीटर प्रति घण्टा है तो मेरी गति 12 किलोमीटर प्रति घण्टा थी।

अगर आप इस पहेली को चित्र बनाकर देखें तो और स्पष्टता होती है।

आज कल
मंगल पर मिला पानी
मंगल पर मिला पानी
मंगल पर...
यहाँ से कितनी दूर पड़ेगा?
डेंगू का मच्छर स्वच्छ पानी में पनपता है।
पता नहीं इसे कहाँ मिल जाता है "स्वच्छ पानी?"
कितनी सीधी सादी गाय
सारा दूध हमें दे देती
आओ इसे पिला दें चाय
- ओरजंग गर्ग
गौमाता
अम्मा लगता है फिर कोई त्यौहार आ गया है। अब तो आधे पेट दूध भी नसीब नहीं
कनक

टर्किश
डिलाइट

Orchis italica

ऑर्किस इटैलिका उर्फ बिन चड्डी का फूल

इस अलमस्त नंग-धड़ंग बच्चे जैसे दिखते फूल को तुम क्या नाम देना चाहोगे? एक तो जनाब चड्डी नहीं पहने हैं और शायद इसकी भरपाई करने के लिए सर पर इत्ता भारी टोप पहन आए हैं। दरअसल ऊपर की ओर घूमी ये इसकी अँखुड़ियाँ-पँखुड़ियाँ हैं जिससे इसे पगड़ीनुमा आकार मिला है।

सफेद और हलके बैंगनी रंगोंवाला यह फूल गुच्छों में खिलता है और भूमध्यसागर के आसपास के इलाकों में उगता है। पुर्तगाल, स्पेन, युनान, तुर्की आदि देशों में यह बहुतायत में पाया जाता है। इस फूल का खाने से लेकर दवाओं तक में इस्तेमाल होता है। इसकी जड़ों को सुखाकर एक पौष्टिक पॉवडर बनाया जाता है। इसे सलेप पॉवडर कहा जाता है। इंग्लैंड में इस पॉवडर को कॉफी की तरह बहुत चाव से पिया जाता है। कुछ जगहों पर इसे गरम पानी में अलग-अलग खुशबुओं के साथ मिलाकर पिया जाता है। तुर्की में लोग इसे दूध में मिलाकर पीते हैं। एक ज़माने में टर्किश डिलाइट नामक यह पेय इतना लोकप्रिय हुआ कि ऑर्किड की यह प्रजाति ही खतरे में पड़ गई।

कहते हैं इसे पीने से बच्चों की दस्त और आँत की बीमारियों से लड़ने की क्षमता भी बढ़ती है। फूल और बीज आने के बाद जब यह पौधा खत्म हो जाता है तब इसकी जड़ों को निकाल लिया जाता है।

इन फूलों में नर व मादा दोनों अंग होते हैं। इसका परागण कीटों द्वारा होता है। फूल का वो हिस्सा जो कीटों को परागण के लिए आकर्षित करता है काफी लम्बा है – इंसान के आकार का – हाथ-पाँवों सहित।

यह आमतौर पर छायादार जगहों में कम उर्वर मिट्टी में खिलता है।

शुचि अभिषेक,
ग्यारहवीं,
अनुभूति बाल भवन,
बैंगलोर

बोलीरंगोली

खिड़की झाँक के देखना कोई
इस घर में रहने आया है
सी-सी करता हाथ मलता है
मंकी कैप पहने आया है

कवि गुलज़ार की इस पंक्ति पर तुम्हारे हज़ार से ऊपर ही चित्र मिले।
मंकी कैप पहन के आया है –
पंक्ति में तुमने मंकी को कैप पहने भी दिखाया है। अच्छा है।
गुलज़ार साब के पसन्दीदा चित्र यहाँ पेश हैं।

इन रचनाकारों को चकमक की सदस्यता या चकमक डायरी या पुस्तकें उपहार में मिलेंगी।

साम्भवी जायसवाल,
चौथी,
डीपीएस
बनारस

अनमोल, छठी, डीपीएस पटना

विहान चौधरी, चौथी, डीपीएस लुधियाना

अभय गर्ग, तीसरी, डीपीएस लुधियाना

इस बार
यानी दिसम्बर की कविता सुनो -

दिन जो क्रिसमस का है
जन्म जीसस का है

बोलीरंगोली

कशिश खिंसवसरा, सातवीं, डीपीएस पुणे

हो सकता है बड़े तुम्हें इसके अर्थ बताएँ। उनके अर्थ सुनो-समझो पर चित्र अपने मन का ही बनाओ...। कोशिश करना कि तुम्हारे चित्र हमें **15 नवम्बर** तक मिल जाएँ। चित्र के पीछे अपना पता, कक्षा, फोन नम्बर ज़रूर लिखना। पता है -

चकमक, एकलव्य,
ई-10, शंकर नगर, शिवाजी नगर,
भोपाल -16 (फोन - 09425010115)
चाहो तो ईमेल कर दो
chakmak@eklavya.in

खिड़की झाँक के देखना कोई
इस घर में रहने आया है
सी-सी करता हाथ मलता है
मंकी कैप पहने आया है

आयुष जायसवाल, छठी, केन्द्रीय विद्यालय शाजापुर

ईश्वरी गोरे, छठी, रियान इंटरनेशनल स्कूल, नवी मुम्बई

रुद्रांक वसन्त, सातवीं, डीपीएस पटना

सुहानी सक्सेना, छठी, आनन्द विहार स्कूल, भोपाल

देवांशी शैलजा, सातवीं, डीपीएस पटना

सलाम!

चौदह साल पहले मैं उस बूढ़े आदमी से मिला था। गाँव के लिए वह एक अजूबा था। उसने बताया कि वह यमलोक रिटर्न है। “कब गए थे यमलोक कब लौटे?” मैंने पूछा था।

“उन्नीस सौ छप्पन में दुर्गा पूजा के विसर्जन के बाद गया था। बीस दिन बाद लौट आया।” उसने मिचमिचाती आँखों से मुझे देखा “काले गए थे, गोरे होकर लौटे थे।” एक दूसरे बूढ़े ने मज़ाक किया। “यह इनका दूसरा जन्म है।”

उसे बूढ़े की कहानी का सच पता करने के लिए खासी छानबीन और मगज़मारी करनी पड़ी। जो मिला वह आपके सामने है।

संजीव

वह सन् 1956 का अक्टूबर का महीना था। किसी कारण वायुमण्डल में निम्न दाब बना तो कई दिनों तक पानी बरसता रहता है। उस बार भी वैसा ही हुआ। सात दिनों तक पानी बरसता रहा – 14.5 इंच बारिश। आसनसोल शहर से चार मील पश्चिम में एक बड़ी खदान हुआ करती थी – बड़ा धेमो। उसके उत्तर में कोलकत्ता जानेवाली रेललाइन थी और दक्षिण में शेरशाह सूरी पथ था (राष्ट्रीय राजमार्ग क्र. 2)। दोनों के बीच नीचा क्षेत्र है जहाँ से एक नाला बहता था। वहाँ एक बड़ी झील बन गई थी। धान के सारे खेत डूब गए थे। बड़ा धेमो खदान में पानी बिलबिलाकर घुसा तो अफरा-तफरी मच गई।

हाज़िरी रजिस्टर के हिसाब से अन्दर गए कुछ लोग निकल आए थे मगर कई अभी भी लापता थे। कोलियरी के पानी को जब तक बन पड़ा पम्प के ज़रिए बाहर निकाला जाता रहा। बाद में पम्प तक पानी में डूबकर नाकाम हो गए। कोढ़ में खाज यह कि आसनसोल-रानीगंज की खदानों में हड़ताल चल रही थी। पम्प माँगने जहाँ भी गए खाली हाथ लौटना पड़ा। चारों तरफ चीख-पुकार मची हुई थी।

चित्रः कनक

एक-एक पल पहाड़ हुआ जा रहा था। क्या बीत रही होगी खदान में गए खदानियों पर! 15 अक्टूबर को 11 खदानिए लौट आए। संयोगवश उन्हें चढ़ानवाली गैलरी मिल गई थी। उम्मीद जगी कि बाकी भी देर-सबेर लौट आएँगे। मनौतियाँ मानी जाने लगीं।

एक विचित्रता और नज़र आई। एक मज़दूर खातिर मियाँ के बारे में हड़बड़ी में यह सूचना दी गई कि उनका पता नहीं है। फिर पता चला, वे अस्पताल में हैं। तब सवाल यह उठा कि वह कौन था जो खातिर मियाँ के नाम से खदान में गया था। छानबीन से पता चला कि खातिर मियाँ की जगह उस दिन उनका भाई खदान में गया था। प्राइवेट कोलियरियों में उन दिनों क्या-क्या नहीं होता था! बारिश बन्द होने पर पानी कमना शुरू हुआ। दुर्घटना के 18-19 दिनों बाद ही खदान में बचाव दल का जा पाना सम्भव हुआ।

रास्ते कचरे, लोहे, लक्कड़ और यहाँ-वहाँ लाशों से अटे पड़े थे। सात-सात मील लम्बी गैलरी पानी से भरी हुई थी। दो-तीन दिन बाद बचाव दल छह नम्बर के शैफ्ट तक पहुँच सका। टॉर्च और लैम्प की रोशनी में उन्होंने देखा कि पानी छत से एक फुट नीचे है। ऐसे क्षेत्र को एयरपॉकेट कहते हैं।

"अरे, कोई है? कोई भाई ज़िन्दा बचा है?"

"कोई है और कोई भई ज़िन्दा बचा है?" की आवाज़ भूतैली प्रतिध्वनि बनकर सुरंग में गूँजती रही। कोई जवाब नहीं। पर बचाव दल ने उम्मीद न छोड़ी। थोड़ी चढ़ान पर आते ही एक दूसरी तरह की जिन्नाती आवाज़ें आने लगीं..."हम हैं! हमें बचा लो।" यह मौत के विरुद्ध ज़िन्दगी की पहली चीख थी।

वे ग्यारह खदानिए थे। और थोड़ी ऊँची जगह पर थे। उनके दोनों तरफ डुबान था। पानी बढ़ता रहा घुटने, जाँघें, कमर, सीना, गला एक-एक कर डूबते गए। मौत उनके गले तक सरसरा रही थी। चारों तरफ पानी था और था घुप अँधेरा। न दिन का पता था न रात का। सिर्फ प्रार्थनाएँ थीं और एक-दूसरे को ढाँढस देती आवाज़ें। वे खदान का वही पानी पी-पीकर और मेंढक, मछली यहाँ तक कि साँप खाकर ज़िन्दा रहने की जद्दोजहद करते गए।

उन्नीसवें दिन आवाज़ें सुनाई देने लगीं, "कोई है? कोई ज़िन्दा बचा है?" साथ ही पानी पर रोशनी चिलकी और उन्होंने बची-खुची ताकत लगाकर जवाब दिया, "हम हैं। हमें बचा लो।"

उन्हें कम्बल या रूई में लपेटकर सावधानी से बाहर निकालकर अस्पताल में भर्ती कराया गया। पानी में रहते हुए उन्हें त्वचा और रक्त संचालन सम्बन्धी कई बीमारियाँ हो गई थीं।

अब जब भी मैं रेल या सड़क से वहाँ से गुज़रता हूँ, बड़ा धेमो की वह बन्द पड़ी खदान उस भयानक घटना की समाधि-सी दिखती है। अब वह "सतइसा" नाम से जानी जाती है। बांग्ला के प्रसिद्ध लेखक शक्तिपद राजगुरू ने उस घटना पर एक उपन्यास *केउ फेरे नाइ* (कोई वापस नहीं लौटा) लिखा था। सच्चाई यह कि 43 गुम खदानियों में से 11 खदानिए 21 दिन बाद तक जीवित रहे।

मन में कितनी ही जिज्ञासाएँ थीं – उस अँधेरे और घुटन में कैसे वे इतने दिन तक ज़िन्दा रहे? मेंढक-मछली और साँप को कच्चा खाना, वह भी उस अँधेरे में...कल्पना से परे है। कितनी बार साँप ने उन्हें काटा होगा, कितनी बार उन्होंने साँप को? उनके कितने साथी साँप के काटने या दूसरे खतरे से मरते गए होंगे? फिर भी उन्होंने डर और मौत के आगे हार नहीं मानी!

मैं उस आदमी के पास दोबारा जाना चाहता था। उसके साहस और जीने की चाह को सलाम करना चाहता था। पूछना चाहता था, "कहाँ से बटोरी उसने वह ताकत!" मगर वह जा चुका था अन्तिम सफर पर ज़िन्दगी की जंग हारकर नहीं...जीतकर।

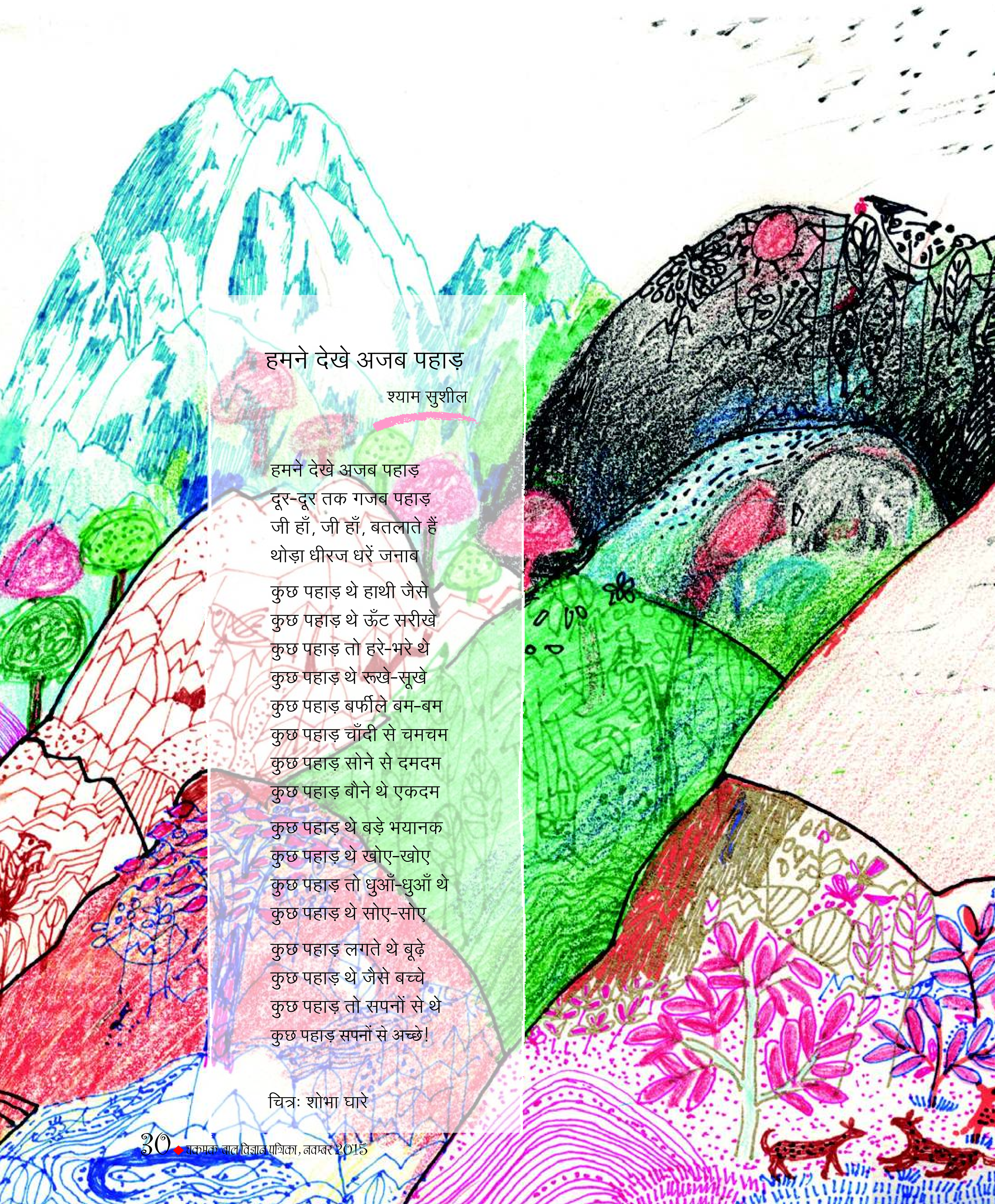

हमने देखे अजब पहाड़

श्याम सुशील

हमने देखे अजब पहाड़
दूर-दूर तक गजब पहाड़
जी हाँ, जी हाँ, बतलाते हैं
थोड़ा धीरज धरें जनाब

कुछ पहाड़ थे हाथी जैसे
कुछ पहाड़ थे ऊँट सरीखे
कुछ पहाड़ तो हरे-भरे थे
कुछ पहाड़ थे रूखे-सूखे
कुछ पहाड़ बर्फीले बम-बम
कुछ पहाड़ चाँदी से चमचम
कुछ पहाड़ सोने से दमदम
कुछ पहाड़ बौने थे एकदम

कुछ पहाड़ थे बड़े भयानक
कुछ पहाड़ थे खोए-खोए
कुछ पहाड़ तो धुआँ-धुआँ थे
कुछ पहाड़ थे सोए-सोए

कुछ पहाड़ लगते थे बूढ़े
कुछ पहाड़ थे जैसे बच्चे
कुछ पहाड़ तो सपनों से थे
कुछ पहाड़ सपनों से अच्छे!

चित्रः शोभा घारे

चित्रः दिलीप चिंचालकर

बिड़ाल बड़ी या केज ?

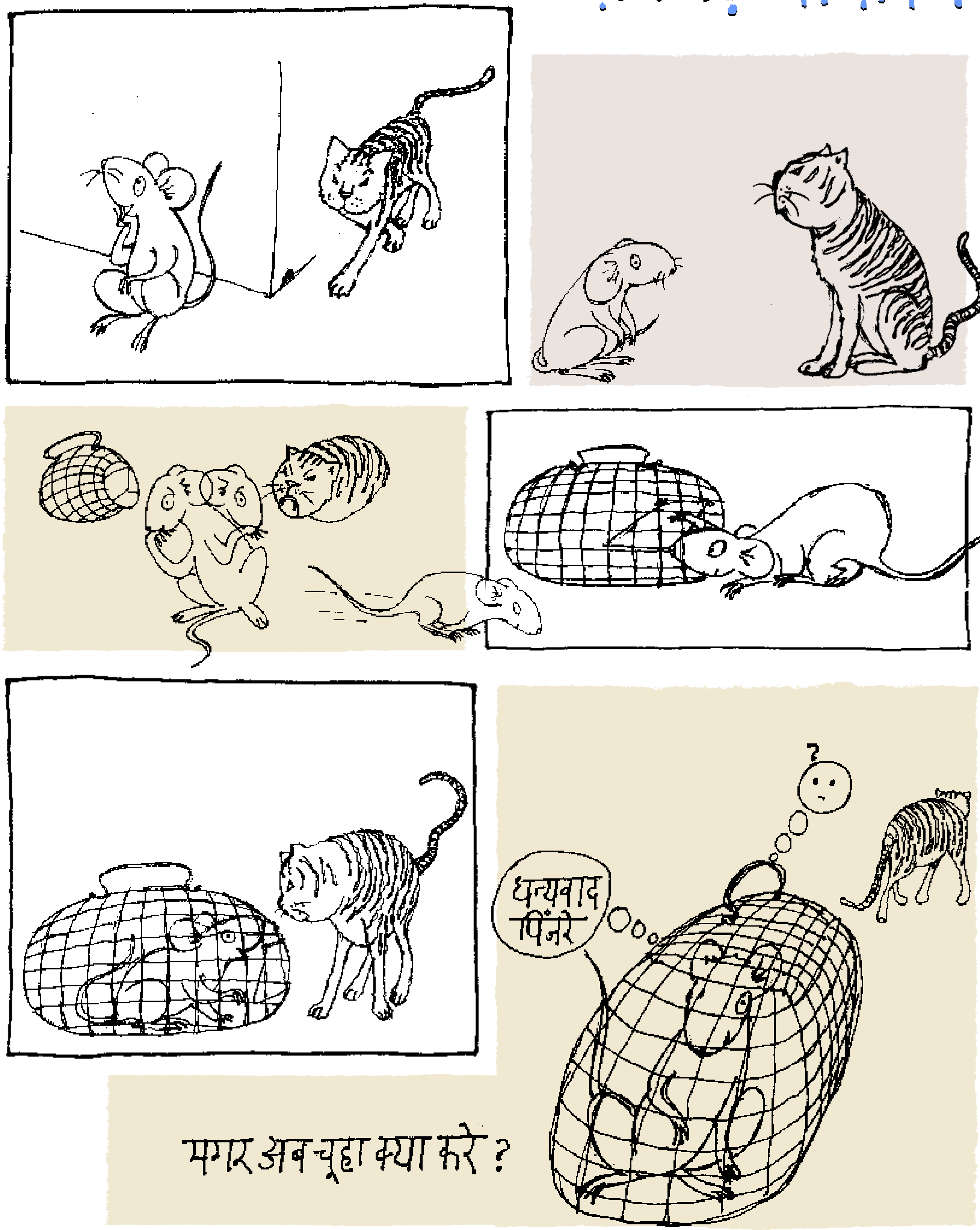

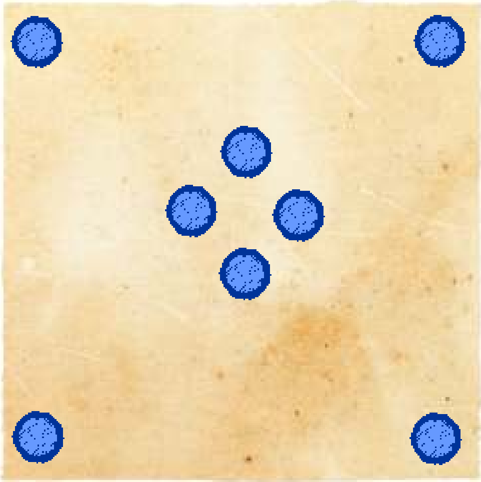

माथापच्ची

क्या तुम अपने आसपास पाए जानेवाले ऐसे 10 पेड़ों के नाम बता सकते हो जिन्हें तुम उनकी पत्तियों से ही पहचान सकते हो?

1 सारा और धारा जुड़वाँ बहने हैं। दोनों में से एक हमेशा सच बोलती है और दूसरी झूठ। मैंने दोनों में से एक से पूछा कि क्या सारा झूठ बोलती है तो जवाब मिला हाँ। मैंने अपना सवाल किस से पूछा था?

2 यहाँ एक किसान के खेत और 8 कुँओं का नक्शा दिया गया है। किसान अपने खेत और कुँओं को अपने चार बच्चों में इस तरह बाँटना चाहता है कि हरेक को खेत का बराबर भाग और 2 कुएँ मिलें। क्या तुम उसकी कुछ मदद कर सकते हो?

3 पापा ने ज़ेनी का 20 सवाल हल करने को दिए। यह तय हुआ कि हर सही सवाल पर उसे 10 टॉफियाँ मिलेंगी और हर गलत जवाब पर उसे 5 टॉफियाँ वापिस करनी होंगी। ज़्यादा से ज़्यादा टॉफियाँ पाने के लिए ज़रूरी है कि सभी सवाल हल किए जाएँ। आखिर में ज़ेनी को 125 टॉफियाँ मिलीं। क्या तुम बता सकते हो कि उसने कितने सवालों का जवाब गलत दिया?

4 मेज़ पर पानी से भरा एक गिलास रखा है। जिया का कहना है कि गिलास आधा भरा हुआ है जबकि समीर का कहना है कि गिलास आधे से ज़्यादा भरा है। क्या तुम केवल गिलास के पानी का इस्तेमाल कर पक्के तौर पर बता सकते हो कि वो आधा भरा है या आधे से ज़्यादा?

एक फूल है
काले रंग का
सिर पर बहुत सुहाय
धूप में वो
खिल-खिल जाए
पर छाया में मुरझाए
(ाफाछ)

काला घोड़ा
सफेद सवारी
एक उतरा
दूजे की बारी
(ििफ ौाँह ाफ)

दुनिया भर की
करता सैर
धरती पर ना
रखता पैर
दिन में सोता
रात में जगता
रात अँधेरी मेरे बगैर
(ढ़ाँज)

5 टेबल टेनिस की एक गेंद एक टाइट गहरे पाइप में फँस गई है। पाइप की चौड़ाई गेंद की चौड़ाई से कुछ ही ज़्यादा है तो तुम हाथ डालकर गेंद नहीं निकाल सकते। पाइप दूसरी तरफ से बन्द है तो गेंद उस तरफ से बाहर भी नहीं आ सकती है। गेंद निकालने के लिए तुम क्या तरीका अपनाओगे?

चित्रः दिलीप चिंचालकर

—अंजलि, चौदह साल,

मंज़िल, दिल्ली

मेरी पहली जादुई घड़ी

आज फिर मैं अपने माता-पिता से वही रट लगा रहा हूँ कि मुझे एक घड़ी चाहिए वो अलग बात है कि मुझे घड़ी में समय देखना नहीं आता। हाँ! यह सच है मैं सिर्फ पाँच साल का हूँ, मुझे घड़ी में समय देखना नहीं आता पर मुझे एक घड़ी चाहिए। वैसे मेरा नाम है राहुल और मैं वही काम कर रहा हूँ, घड़ी माँगना। ऐसे मैं यह घड़ी इसलिए माँग रहा हूँ क्योंकि यह मेरे दोस्तों के पास भी है, पर मैं आज भी अपने माता-पिता को मनाने में असफल रहा। अगले दिन मैं जब विद्यालय से लौट रहा था, तो मुझे एक गिरा हुआ डिब्बा मिला। मुझे कुछ समझ में नहीं आया तो मैं उसे उठाकर घर ले गया।

जब मैं उस डिब्बे को घर में ले जाकर चुपचाप देखा तो उस डिब्बे पर "समिया" लिखा हुआ दिखा और जब मैंने उसे खोला तो उसमें से एक घड़ी मुझे मिली। मैं उस समय इतना खुश था जैसे मैंने दुनिया ही जीत ली है। पर मैं यह जानता था कि इसे रखने की इजाज़त मुझे मेरे माता-पिता नहीं देंगे तो मैंने इसे छुपा दिया था और मैंने इसका नाम "साम" रखा। मैं अत्यन्त खुश था और दोस्तों को दिखाता रहता था। एक बार गलती से उसका शीशा टूट गया और बाद में खुद ठीक हो गया। मैं बहुत डर गया और उसे फेंक दिया। जब मैं घर पहुँचा तो वह मेरे बिस्तर पर रखा हुआ था। मैं इस बार बहुत डर गया और उसे डिब्बे के साथ फेंका। पर वह वापस आ गया आखिर में मैंने उसे किसी को दे दिया और वह फिर मेरे पास वापस न आया।

–आर्यन, आठवीं, दिल्ली पब्लिक स्कूल, पटना

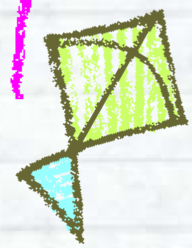

तितली पल

एक दिन मेरे स्कूल के मैदान में जब मैं खेल रही थी, मैंने एक तितली को फूल पर बैठे देखा। वह इतनी सुन्दर और रंग-बिरंगी थी। देखते ही देखते वह मेरे हाथ पर बैठ गई। उस पल मुझे इतने अच्छा लगा कि मेरा दिल कहता है ऐसी ही एक बड़ी-सी तितली हमेशा मेरे साथ रहे।

–वान्या अरोड़ा, तीसरी, डी.पी.एस, लुधियाना, पंजाब

सहेली के संग खेलमदारी

मेरा बचपन मुझे बहुत ही अच्छा लगता था। मैं एक बार अपनी सहेली के साथ स्कूल जाने के लिए घर से निकली तो रास्ते में एक खेलमदारी दिखा रहा था। उसके आसपास बहुत सारे लोग जमा थे और सब खेलमदारी देख रहे थे। मैं अपनी सहेली से बोली कि चलो हम दोनों भी खेलमदारी देखते हैं। मेरी सहेली बोली, "नहीं हमें देर हो जाएगी।" तो मैं बोली, "अभी तो बहुत समय है। चलो हम दोनों थोड़ी देर देखकर फिर चलेंगे।" फिर मैं और मेरी सहेली देखने चले गए। और हम लोगो ने देखा कि एक भालू नाच रहा था जिससे सारे बच्चे और लोग देखकर हँस रहे थे। हम दोनों भी खूब भी हँस रहे थे। हमें स्कूल के लिए देर हो गई। और जब हम दोनों स्कूल पहुँचे तो हमें हमारी मैडम ने दो छड़ी लगाई। उसके बाद मैं देर से नहीं जाती।

–नेहा कुमारी, आठवीं, बड़हुलिया ग्राम, उ. प्र.

–माधवन, पन्द्रह साल, ओल्डमुरुदम, थिरुवन्नामली, तमिलनाडु

–संदली वर्मा, पहली, पटना

मेरा पन्ना

–राजीव, मुस्कान संस्था भोपाल, म. प्र.

शरारती हाथी

एक जंगल था। उस जंगल में बहुत सारे जानवर रहते थे। उन जानवरों में से एक हाथी था। वह हाथी बड़ा शरारती था। वह हाथी किसी छोटे जानवर को पानी के तालाब में फेंक देता था। जानवर उस हाथी से बहुत परेशान थे। एक दिन भालू मामा केले का ठेला लेकर जा रहा था। हाथी ने भालू मामा का ठेला उलटा कर दिया। भालू मामा रोने लगे तो भालू मामा के पास बहुत सारे जानवर इकट्ठे हो गए और उन जानवरों ने भालू मामा का ठेला सीधा किया। भालू मामा चला गया और केला बेचने लगा। सभी जानवरों ने एक सभा बुलाई और हाथी को मज़ा चखाने के लिए एक तरकीब सोची। सभी जानवरों ने एक जगह दलदल जमा किया। हाथी खेलता, शोर मचाता आ रहा था। उसने सभी जानवरों को एक जगह इकट्ठे होते देखा। वह दलदल जानवरों के ऊपर फेंकने लगा। जैसे ही हाथी अन्दर जाने लगा दलदल में फँस गया। सभी जानवर ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे। और हाथी से पूछा कि अब हमें परेशान करोगे। हाथी बोला, "अब मैं आप लोगों को परेशान नहीं करूँगा।" फिर सभी जानवरों ने मिलकर हाथी को बाहर निकाला। हाथी ने सभी को धन्यवाद दिया।

–सोयल खान, नौ साल, दिगन्तर विद्यालय, जयपुर, राजस्थान

चिड़िया रानी

चिड़िया रानी आओ तुम
मुझको गीत सुनाओ तुम
थोड़े दाने खाओ तुम
दाने खाकर उड़ जाओ तुम
मेरी सहेली बन जाओ तुम
मुझको भी उड़ना सिखलाओ तुम
मेरे आँगन में तुम रोज़ आना
चुन-चुन दाने तुम खूब खाना

–सनी, अपना स्कूल तमसहा,
कानपुर, उ. प्र.

हमारा मुल्क

इब्ने इंशा

ईरान में कौन रहता है?
ईरान में ईरानी कौम रहती है।
इंग्लिस्तान में कौन रहता है?
इंग्लिस्तान में अँग्रेज़ी कौम रहती है।
फ्राँस में कौन रहता है?
फ्राँस में फ्राँसीसी कौम रहती है।
ये कौन-सा मुल्क है?
ये पाकिस्तान है।
इसमें पाकिस्तानी कौम रहती होगी?
नहीं, इसमें पाकिस्तानी कौम नहीं रहती है।
इसमें सिन्धी कौम रहती है।
इसमें पंजाबी कौम रहती है। इसमें बंगाली कौम रहती है।
इसमें यह कौम रहती है। इसमें वह कौम रहती है।
लेकिन पंजाबी तो हिन्दुस्तान में भी रहते हैं।
सिन्धी तो हिन्दुस्तान में भी रहते हैं।
फिर ये अलग मुल्क क्यों बनाया था?
गलती हुई, माफ कर दीजिए, आइन्दा नहीं बनाएँगे।

गुरु -चेला सम्वाद

असगर वजाहत

चित्रः राजन्या प्रजापति, दसवीं, केन्द्रीय विद्यालय, विदिशा, म. प्र.

गुरुः चेला, हिन्दू-मुसलमान एक साथ नहीं रह सकते।
चेलाः क्यों गुरुदेव?
गुरुः दोनों में बड़ा अन्तर है।
चेलाः क्या अन्तर है?
गुरुः उनकी भाषा अलग है... हमारी अलग है।
चेलाः क्या हिन्दी, कश्मीरी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, मलयालम,
तमिल, तेलगु, उड़िया, बंगाली आदि भाषाएँ मुसलमान नहीं बोलते... वे सिर्फ उर्दू बोलते हैं?
गुरुः नहीं-नहीं, भाषा का अन्तर नहीं है...धर्म का अन्तर है।
चेलाः मतलब दो अलग-अलग धर्मों को माननेवाले एक देश में नहीं रह सकते?
गुरुः हाँ, भारतवर्ष केवल हिन्दुओं का देश है।
चेलाः तब तो सिखों, ईसाइयों, जैनियों, बौद्धों, पारसियों, यहूदियों को इस देश से निकाल देना चाहिए?
गुरुः हाँ, निकाल देना चाहिए।
चेलाः तब इस देश में कौन बचेगा?
गुरुः केवल हिन्दू बचेंगे...और प्रेम से रहेंगे।
चेलाः उसी तरह जैसे पाकिस्तान में सिर्फ मुसलमान बचे हैं और प्रेम से रहते हैं?

(उर्दू की आखरी किताब, “मुश्किल काम” से साभार)

(आखरी किस्त)

मिलना दो मगरमच्छों का

जसबीर भुल्लर

चिड़ियाघर से उन्होंने किरली मादा मगर को ट्रक में लादा और सुबह वहाँ से चलकर शाम तक वन्य जीवों के आवास पहुँच गए। वहाँ से उन्होंने दो और बन्दे साथ लिए और ट्रक को नदी की ओर मोड़ लिया। एक जगह पर उन्होंने ट्रक को रोक लिया। रस्सों से पकड़कर उन्होंने किरली को नीचे उतार लिया। और तंग पगडण्डी की ओर ले चले।

उन्हें चलने में बहुत मुश्किल हो रही थी। कई जगह तो वे किरली को लगभग घसीटते हुए चल रहे थे। रास्ते में उन्होंने कई बार रुक-रुककर साँस ली और फिर पहाड़ी की चोटी पर पहुँच गए।

किरली को ज़मीन पर रखकर वे बहस करने लगे। फैसले पर पहुँचकर उन्होंने किरली के दो रस्से बँधे रहने दिए और बाकी रस्से खोल दिए। रस्से के सिरे हाथ में पकड़कर उन्होंने किरली मगर को नीचे लटका दिया। वे धीरे-धीरे रस्सा ढीला छोड़ते गए। अभी वह ज़मीन तक पहुँची भी न थी कि उन्होंने रस्से को ज़ोर-से झटक दिया। बँधी हुई गाँठें खुल गईं। किरली बन्धनों से मुक्त हो गई और धप्प की आवाज़ के साथ ज़मीन पर जा गिरी।

वह जहाँ गिरी चुपचाप वहीं पड़ी रही। बारिश होने के कारण वहाँ काफी पानी था। यदि सूखा मौसम होता तो उसे हवा से पानी के पास होने का अनुभव हो जाता। पिछले दो दिनों से ही किरली का इंसानों से वास्ता पड़ा था। आदमी उसे अपने लिए बड़ा खतरा लगने लगे थे। वह आदमियों से उलझना नहीं चाहती थी। उसने लौट रहे पैरों की आहट सुन ली थी। फिर भी वह दुबककर पड़ी रही। उसे डर था कि कहीं आदमी वापिस न लौट आएँ। आदमियों के कदमों की आहट दूर होते-होते गुम हो गई थी।

किरली ने आँखें खोलीं तो हैरान रह गई। चारों ओर हरा-भरा जंगल था। बारिश ने पेड़-पौधों के पत्ते धो डाले थे। उससे कुछ गज़ की दूरी पर धीमी गति से नदी बह रही थी।

कुछ देर तक उसे अपनी आँखों पर यकीन नहीं हुआ। उसे यह दृश्य बीते समय के सपने जैसा लगा। उसने अपनी मुक्ति की उम्मीद ही छोड़ दी थी।

वह धीरे-धीरे नदी की ओर चल पड़ी।

अभी उसने पानी में पैर भी नहीं डाला था कि आहट सुनकर चौंक गई। यहाँ वह अकेली नहीं थी। वह चौकस हो गई। जो भी उससे कुछ दूरी पर था, वह प्रतिद्वन्दी था या भोजन था! जंगल ने उसे यही सिखाया था। झाड़ियों से एक मगरमच्छ बाहर निकला। किरली किसी अन्य मगरमच्छ के वहाँ होने के बारे में सोच भी नहीं सकती थी। अब दोनों के मिलने का एक ही तरीका था – या तो किरली दुश्मन को मार डाले या वह किरली को मार डाले।

दोनों ने पैंतरा ले लिया।

इस जगह पर कब्ज़ा करने का अधिकार उसी को था जो लड़ाई में जीत जाए। मगरमच्छ ने किरली पर छलाँग लगा दी। किरली दुश्मन के हमले के लिए पहले से तैयार थी। उसने करवट ली। लेकिन दूसरे मगरमच्छ की पूँछ उसे इस तरह लगी कि वह मगरमच्छ के साथ लुढ़कती हुई खुद ही पानी में जा गिरी।

छपाक!

काफी पानी बाहर की ओर उछला।

चित्र : अतनु राय

बारिश लगातार हो रही थी। बिजली ज़ोर-से कड़की। बिजली की चकाचौंध में दोनों के शरीर चमके।

किरली फुर्ती से मगरमच्छ से दूर हट गई ताकि वह उस पर घातक हमला कर सके। दूसरे मगरमच्छ ने ज़ोर-ज़ोर से पानी में पूँछ हिलाई। पानी झाग से भर गया। किरली कुछ ठिठकी। दूसरे मगरमच्छ का तो लड़ाई का कोई इरादा नहीं लगता था। वह कुछ इस तरह की हरकतें कर रहा था जैसे दोस्त हो।

उसने कुछ दूरी से किरली के चारों ओर एक चक्कर लगाया। एक चक्कर! दूसरा चक्कर और फिर तीसरा चक्कर! किरली ने अचानक मग्धू को पहचान लिया था। वह मग्धू ही था। उसका अपना मग्धू।

मग्धू मगरमच्छ ने भी उसे पहचान लिया था।

दोनों ने एक दूसरे की ओर छलाँग लगाई और गुत्थम-गुत्था होकर पानी में गिर पड़े। उन्होंने पूँछें हिला-हिलाकर पानी में झाग का एक समन्दर बना दिया था। वे एक दूसरे के प्रति स्नेह और प्रेम को इसी प्रकार व्यक्त करते थे।

अचानक पानी शान्त हो गया। दोनों पानी से निकलकर कीचड़ में लेट गए। दोनों ने एक दूजे से मिलने की उम्मीद छोड़ ही दी थी। इस समय वे तन और मन से खुश और तृप्ति से सराबोर थे। किरली ने अपनी पूँछ घुमाकर उसके ऊपर रख दी।

बारिश होती रही।

बिजली कड़कती रही। बादल गरजते रहे।

दोनों उसी तरह लेटे रहे। उन्हें कुछ पता नहीं था कि रात में कब दो आदमी आकर, छोटी पहाड़ी से आगे झुककर कुछ देर तक उन्हें देखते रहे और फिर दबे पैर वापिस लौट गए ताकि उनके आनन्द व आराम में कोई खलल न पड़े।

किसी के भी आने का उन्हें कैसे पता चलता! वे दोनों तो इस समय सपना देख रहे थे। किरली अब पहले जैसे ही गोल-गोल अण्डे देगी। उन अण्डों में से फिर छिपकलियों जैसे प्यारे-प्यारे मगरमच्छ निकलेंगे। उनका बड़ा-सा परिवार हो जाएगा। वे सब मिलकर धूप सेंकेंगे। आपस में लाड़-प्यार करेंगे।

इस बार वे उजड़ेंगे नहीं, हमेशा साथ रहेंगे।

दिन के उगने पर अब सूरज भी निकल आएगा।

इससे ज़्यादा और चाहिए भी क्या? किरली के लिए अब सब कुशल था। यदि कुछ बाकी था तो केवल यह कि वह अब रोना चाहती थी। पर क्या करती? मगरमच्छों की आँखों में तो खुशी के आँसू भी नहीं आते...

समाप्त

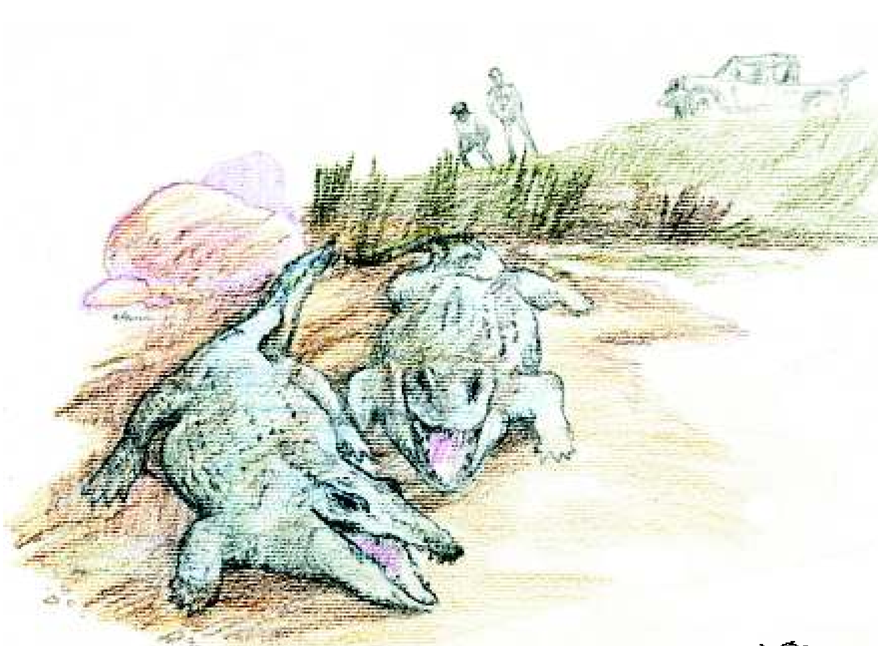

अनारको के पेट की तितलियाँ आज़ाद होकर सारे बदन में फैल गईं।

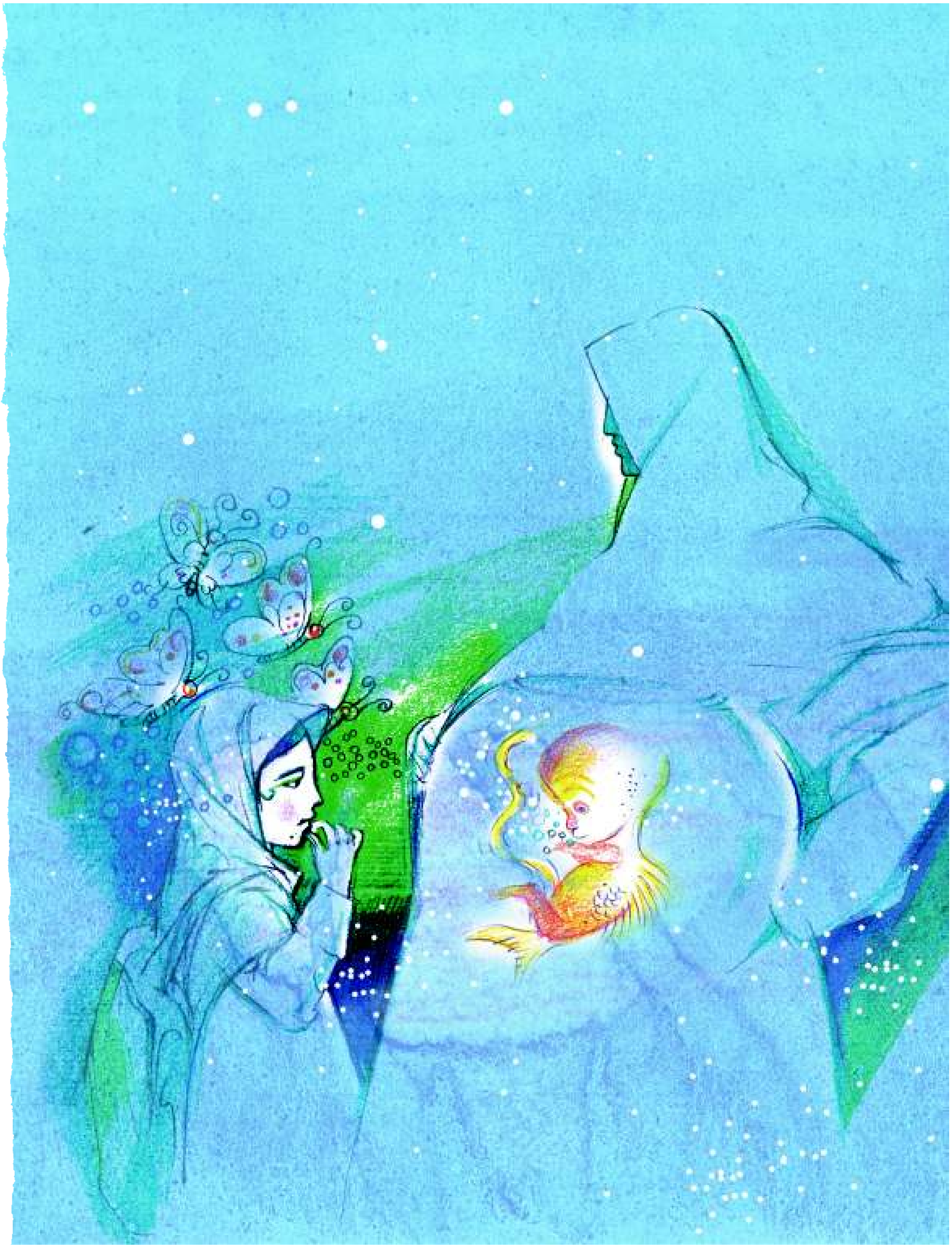

चित्रः शशि शेट्या

अनारको की ज़िन्दगी में इतना बड़ा धमाका कभी नहीं हुआ था। न इतना बड़ा जादू। एक ऐसी बात जो आधी रोशनी में हो, आधी अँधेरे में। आधी बताने लायक हो और आधी समझ लेने लायक। आधी छुपी, आधी उजागर। बात की शुरुआत हुई फूलपत्ती के घर आने से। आज स्कूल से दोनों साथ आए थे क्योंकि फूलपत्ती को उसकी भूगोल की कॉपी अनारको से वापस लेनी थी। कॉपी-वापी लेने के बाद पेट भरकर इधर-उधर, इसकी-उसकी बातें कह-सुन ली गईं। फिर आने वाले इम्तिहान के बारे में अम्मी के एक नहीं, दो नहीं, तीन बार याद दिलाने के बाद, लगभग जाते-जाते फूलपत्ती ने जो कहा तो पहले तो उसे यकीन ही नहीं हुआ। पर फिर खुशी से काँप-सी गई। उसके कान गर्म होकर लाल हो गए थे।

अनारको का एक और दिन

सतीनाथ षडंगी

अनारको के कानों की यह हालत फूलपत्ती की बात से नहीं हुई थी कि उसकी अम्मी के पेट में बच्चा है। उससे तो उसके पेट में तितलियाँ फड़फड़ा रही थीं। शर्म तो उसे यह सोचकर आई कि अम्मी के पेट में बच्चा आया कैसे!

बच्चा पेट में कैसे आता है यह कोई और बताए उससे पहले कल्लू अनारको को बता चुका था। या यूँ कहो कि समझा चुका था। कल्लू वही जो सारे बच्चों का दोस्त है और पूरी गली का रंगीला दादा है।

अनारको और दूसरे बच्चों को कल्लू ठण्ड में ठिठुरते हुए मिला था। एक बेचारे पिल्ले जैसा। और तुरन्त ही सबने उसे अपना लिया था। तब से लेकर अब दूसरे जाड़े की शुरुआत थी। अब कल्लू वह रोतला-थरथराता पिल्ला न रहा था- एक गबरू जवान कुत्ता था। अपनी टोली का दादा बनने और बने रहने के लिए उसे जितनी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ती थीं उतना ही प्रेम करना पड़ता।

अनारको और दूसरे बच्चों ने कल्लू को एक नहीं कई बार भूरी, झबरी, रानी और दूसरी कुतियाओं का पीछा करते, उन्हें सूँघते और उनसे चिपकते देखा था। फिर भूरी या रानी के पेट फूलते जाते और एक दिन सुबह-सुबह मिल जातीं कभी चार, कभी छह नन्हे पिल्ले को दूध पिलातीं। ठण्ड और दुनिया में ज़िन्दा रहने की तमाम समस्याओं के खिलाफ लगातार शिकायत करते हुए काले, सफेद, भूरे पिल्ले बन्द आँखों के बावजूद दूध के लिए माँ पर ऐसे टूटते जैसे सीताफल का ठेला पलटा हो और लूट मची हो।

कल्लू और उसके कुनबे से सब कुछ जानने के बावजूद अनारको को यह मानने में दिक्कत हो रही थी कि उसकी अम्मी के पेट में बच्चा कैसे आया! वह हैरान होती कि कभी अम्मी तथा पापा ने उसे इस बारे में कुछ बताया क्यों नहीं? वैसे जानने और मानने का अन्तर अनारको के साथ ही हो ऐसी कोई बात नहीं है। अब विज्ञान के मास्साब को ही लें। बोर्ड पर चित्र बनाकर चन्द्रग्रहण समझाते हैं फिर ग्रहण लगने पर पोखरी में गिन-गिनकर डुबकी लगाते हैं। पर फूलपत्ती थी कि बिलकुल पीछे ही पड़ गई थी, मनवाकर ही छोड़ा।

फूल पत्ती की बड़ी बहन नर्स है। वह बच्चों से दुनिया के सभी मसलों पर बात कर सकती है। उनकी दी जानकारी से अनारको को समझ में आया कि अम्मी के पेट में बच्चा थैले में यूँ रहता है जैसे पानी में मछली। जैसे अपन साँस लेते हैं वैसे वह नाक से सुड़क-सुड़ककर पानी अन्दर लेती है, बाहर फेंकती है। अम्मी के पेट के अन्दर अम्मी के खून से पलते-बढ़ते हुए वह सुन सकती है, आँखें खोल-बन्द कर सकती है, उलटम-पलटम कर सकती है और ऐसी ही और बातें।

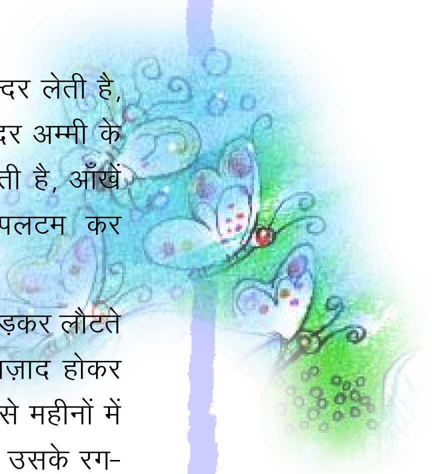

फूलपत्ती को गली के मुहाने तक छोड़कर लौटते हुए अनारको के पेट की तितलियाँ आज़ाद होकर सारे बदन में फैल गईं। अब बस थोड़े से महीनों में घर में बच्चे के आने की बात की खुशी उसके रग-रग में ऐसी बही कि उसका सिर चकराने लगा। साँस रुक-सी गई। खुशी की इस आड़ में अम्मी-पापा का उसको अनजान बनाए रखने के खिलाफ पैदा हुआ गुस्सा भी बह गया। अनारको ने तय किया कि आज शाम अम्मी-पापा को घेरकर उन्हें झूठ न बोलना पड़े ऐसे सवालों के अलावा सारे सवाल करेगी। उनसे खूब सारी बातें करेगी। आधी छुपी-आधी उजागर बातें! बोल लेने की बातें, समझ लेने की बातें!

अनारको यह सब सोचते हुए घर पहुँचने को हो ही रही थी कि अचानक कल्लू सामने आ गया। पेट के गहरेपन से गुर्राकर उसकी ओर ऐसे देखा जैसे पूछ रहा हो कि सहेली को छोड़ने इतनी दूर जाने की क्या ज़रूरत थी। अनारको ने सोचा कि पापा में कोई कल्लूवाली बात हो न हो कल्लू में तो पापावाली बात आने लगी है। वह मुस्कराई....

महेश कुमार की दो कविताएँ

दाना

पोली-पोली
मूमफली में
दाना नहीं है।
लेकिन मुन्नी ने
अब तक ये
माना नहीं है।

फोड़ के देखेगी खुद
तब ही मानेगी।
“पोली” मतलब क्या है
इसको जानेगी।

सवेरा

जगा
तो सवेरा हुआ
या
सवेरा हुआ
तो जगा।
पता नहीं लगा।

चित्रः आद्या जोशी, सातवीं, भोपाल

अजगर का पेट *(पेज 7 का शेष भाग)*

लालजी उस दृश्य को देखकर थर्रा उठा। अभी तक उसने सिर्फ साहूकार का ही पेट देखा था। एक अजगर का पेट वह पहली बार देख रहा था जो साहूकार के पेट की तरह ही भूखा और खूँखार था... और जिसमें एक समूचा आदमी समाया जा रहा था।

हालाँकि जंगल में अजगर तो उसने बहुत बार देखा था, पर इस तरह किसी आदमी को लीलता हुआ अजगर वह पहली बार देख रहा था। लालजी के लिए वह एक भयानक दृश्य था। बूढ़ा छटपटा रहा था और अजगर अपने पेट में उसे भरे ले रहा था।

अचानक लालजी को याद आया कि शिकार करते हुए अजगर का शरीर बेकार हो जाता है। उसमें आक्रमण करने की शक्ति नहीं रह जाती।

वह हिम्मत करके आगे बढ़ा और एकदम अजगर के पास जाकर खड़ा हो गया। उसे लगा कि बूढ़े की कमर के पास से अजगर उसे देख रहा है। लेकिन उसकी आँखों की ओर से ध्यान हटाकर लालजी ने अपना हँसिया उसके जबड़ों में फँसा दिया...

कर्र-कर्र... जंगल में वह आवाज़ काफी देर तक गूँजती रही। तब तक, जब तक कि उस अजगर के पेट से एक बूढ़ा आदमी आज़ाद नहीं हो गया।

शोर बरपा है...

(पेज 13 का शेष भाग)

वैसे देखा जाए तो अपने शहरों में यूँ ही भी शोर का स्तर ज़्यादा होता है। कारखानों, ट्रैफिक, बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन आदि के कारण आवाज़ होती रहती है। इनमें से कई आवाज़ें बेवजह होती हैं। जैसा सिग्नल पर बत्ती के हरी होते ही बेसब्री से हॉर्न बजाते ही रहना। इसने बड़े शहरों में मुख्य सड़कों के पास रहना मुश्किल बना दिया है। हो सकता है तुम या तुम्हारे दोस्त ऐसी जगहों पर रहते हों। और तुम्हें लग सकता है कि हमें शुरू-शुरू में तो थोड़ी तकलीफ हुई थी पर अब तो कोई दिक्कत नहीं होती। अब तो आदत हो गई है। इस पर डॉक्टरों का कहना है कि आवाज़ की आदत नहीं होती। बल्कि आप थोड़े-थोड़े बहरे होते जाते हैं। यह आम बात है कि शहरों में रहनेवाले देहातों में रहनेवालों से ऊँचा सुनते हैं। यह उसी का नतीजा है।

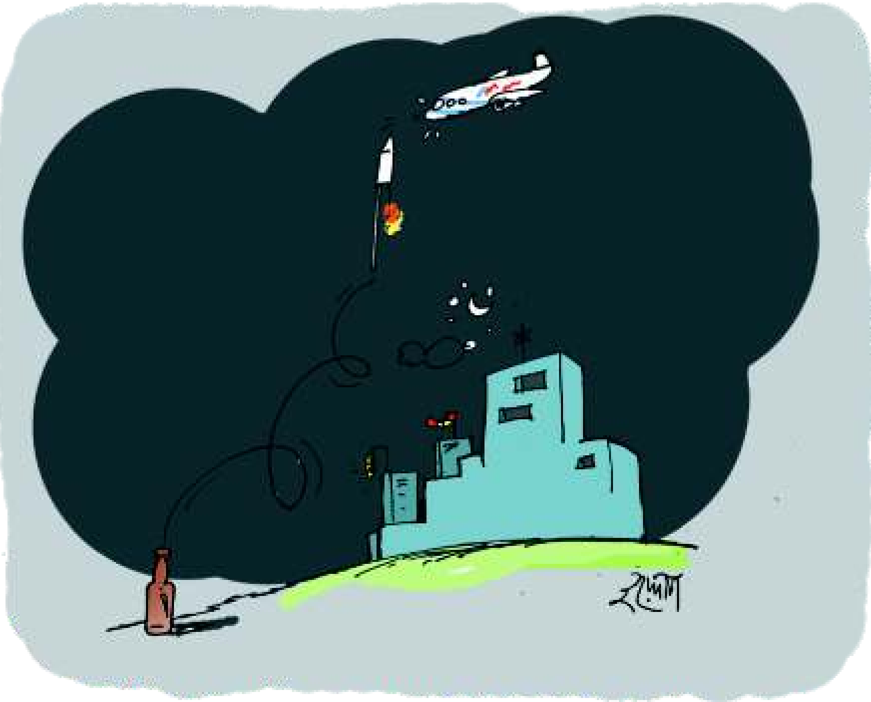

फनी पाठशाला

इरफान

रावण अगर आपके बनाए कार्टून ही देख लेता तो वह यूँ ही मैदान छोड़कर भाग जाता...।

दोस्तो,

तुम सब ने तो कमाल कर दिया। अगर रावण तुम्हारे बनाए कार्टून ही देख लेता तो शायद युद्ध की ज़रूरत ही नहीं पड़ती। वह यूँ ही मैदान छोड़कर भाग जाता...। तुम्हारे बनाए रावण सुन्दर हैं। यह अलग बात है कि रावण बुराई के प्रतीक के रूप में जाना जाता है। लेकिन एक बात है – आपने अगर रावण के साथ दूसरे कैरेक्टर भी बनाए होते, उनसे कुछ कहलवाया होता तो आपके चित्र भी कार्टून बन जाते। उनमें फिलहाल व्यंग्य, चुटकियाँ कम हैं। उम्मीद है अगले अंक में तुम इस बात का ख्याल रखोगे। जैसे इस बार का मेरा बनाया कार्टून ही ले लें। उसमें रॉकेट को हवाई जहाज़ के सामने आते दिखाया है जिससे पायलट का पसीना छूट गया है। अगले अंक का विषय है – स्कूल। स्कूल में तुम्हारे दोस्त, शिक्षक आदि किसी भी चीज़ पर कार्टून बना कर भेज दो। खूब मज़े करो और खूब कार्टून बनाओ ...

इरफान

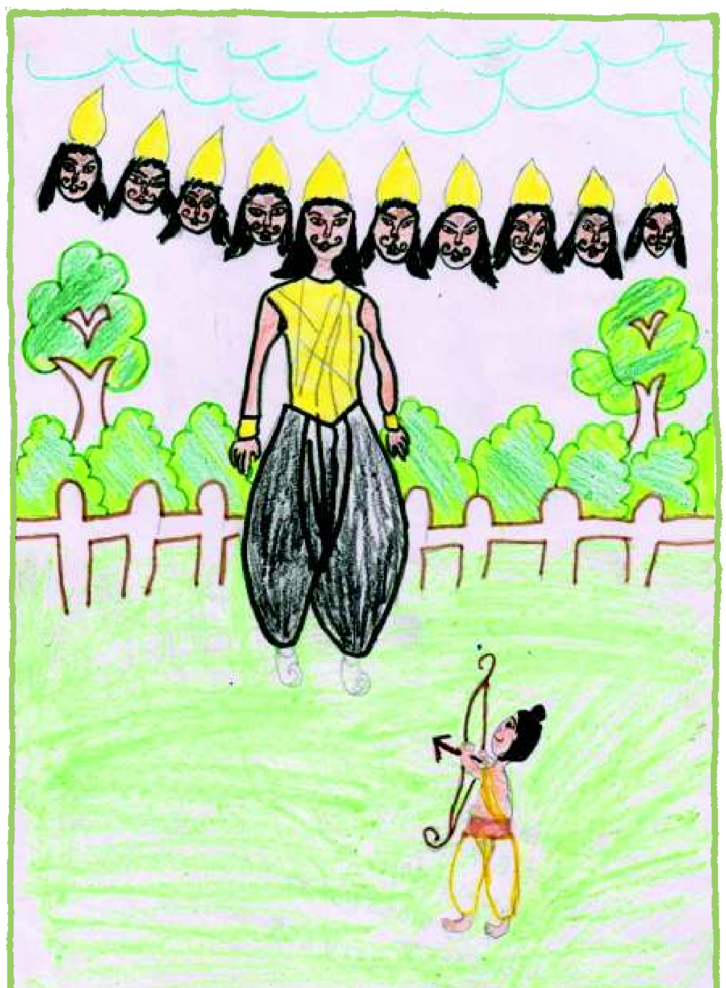

श्रेया कुमारी, पाँचवीं, बाल भवन किलकारी, पटना

रावण

सुभाष वसेकर

रावणाची
तोंडे दहा
एक म्हणे,
"हवा चहा!"

दूसरे तोंड
गाणे गाते
तिसऱ्याला
जाम्भई येते!

चौथे म्हणे
"लागली भूक!"
पाचवे हसे
खूक् खूक्!

सहावे तोंड
कुरकुर करी
घोरण्याचा सूर
सातवे धरी!

आठव्याला
येई रडू
नववे लागे
उगा बडबडू

रागावून
दहावे बोले
"देऊ काय
एकेकास टोले?"

मराठी से हिन्दी
तोंड - मुँह, दहा-दस, कुरकुर - चिड़चिड़,
घोरण्याचा सूर - सुर में खर्राटे,
उगा बडबडू - बेकार में बड़बड़ाना,
ऐकाकास टोले - एक-एक को मुक्का लगाऊँ?

रुत्वी मेवावाल, चौथी, डीपीएस तापी

राहुल आनन्द, छठवीं, पटना

हर्ष राज, डीपीएस पटना

शेखर, पहली, अपना स्कूल, कानपुर

फनी पाठशाला

उपासना मुखर्जी, चौथी, डीपीएस तापी

सीमा, पाँचवीं, अपना स्कूल, कानपुर

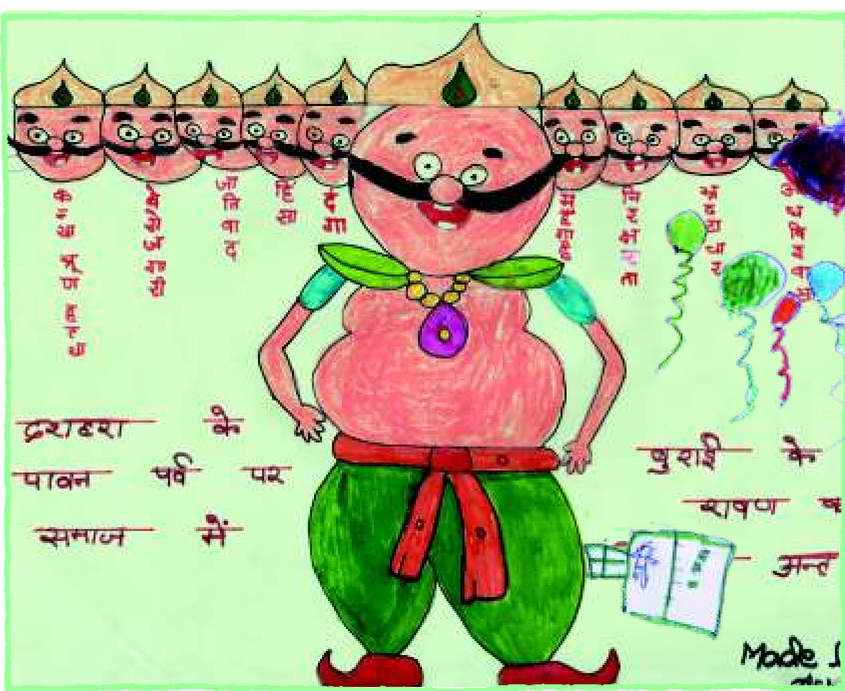

अशमी, तीसरी. डीपीएस वाराणसी

शेरनी, पहली, मुस्कान, भोपाल

चकमक कविता कार्ड

पढ़ो और फिर चाहो तो अपने दोस्त को
इसी कार्ड के दूसरी तरफ एक चिट्ठी लिखकर भेज दो।

कविता कार्ड के इस पहले गुच्छे में हैं बारह कविताएँ।
12 कार्डों की कीमत है सिर्फ पच्चीस रुपए।

इन्हें मँगाने के लिए तुम चकमक के पते पर लिख सकते हो।
या हमें फोन कर सकते हो। या चाहो तो सीधे ऑनलाइन मँगा लो -
http://www.eklavya.in/pitara/chakmak_kavita_cards

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म. प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: सुशील शुक्ल

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादक: सुशील शुक्ल